भारतीय वाङ्मय

हिन्दी तथा अहिन्दीभाषी क्षेत्रों के साहित्यिक-सांस्कृतिक समाचारों की मासिक पत्रिका

वर्ष 11 | **अक्टूबर** 2010 | **अंक** 10

पुस्तकें अच्छी शिक्षक होती हैं वे पढ़ाती हैं और
उनका दिया हुआ गृहकार्य आप जिन्दगी भर,
कर सकते हैं।

❑❑❑

दुनियाँ जिनको विश्वविजेता के रूप में जानती है,
उन्होंने थोड़े से अर्से के लिये,
धरती के छोटे हिस्से पर राज किया।
महान विचारकों द्वारा लिखी गयी पुस्तकें युगों तक
धरती के कोने-कोने में राज करती रही हैं।

❑❑❑

पुस्तकें मित्र बनाती हैं, एक ही पुस्तक को पढ़ने एवं
उस पर चर्चा करने वालों के बीच
मित्र भाव पैदा होता है।

❑❑❑

विद्यालय सरस्वती के मन्दिर होते हैं,
पुस्तकालय सरस्वती-पुत्रों के उपासना स्थल
होते हैं।

❑❑❑

पुस्तकें विद्वान के लिए वैभव होती हैं और
धनवान का वैभव प्रदर्शन।

❑❑❑

पुस्तकें इन्सान को बोलना सिखाती हैं। पुस्तकों के
बारे में जितना भी कहा जाये, वह कम होता है।

❑❑❑

लेखक और पाठक के बीच पुस्तक परिचय का ही
नहीं, विचारों के विनिमय का भी माध्यम होती है।

❑❑❑

जिन्दगी का निचोड़ तजुर्बा होता है,
तजुर्बों का निचोड़ ज्ञान होता है।
ज्ञान का निचोड़ किताब होती है।

❑❑❑

किसी आदमी को जानना हो तो
उन पुस्तकों से जानना चाहिए जिन्हें वह पढ़ता है।

❑❑❑

पुस्तकों का प्रेमी मूर्ख भी होता है, पुस्तकों को
ढूँढ़ने, संग्रह करने और सम्भालने में जितना वक्त
लगाता है, उतना वक्त पुस्तकों को पढ़ने में लगाता
तो पण्डित बन जाता।

—राजेन्द्र केडिया

शारदीय आलोक-प्रभा

प्रकृति का मोहक संभार लिये चुपचाप बदलती हैं ऋतुएँ, सुबह-शाम की समय-सन्धियों में व्यक्त होने लगता है बदलती हुई ऋतु का अंतर्तम, अंतर्विभव का यह उल्लास व्यक्त होता चलता है प्रत्येक समय-सन्धि में। धूलभरी उत्तप्त गर्मियों की विश्रान्ति है वर्षा, मूसलाधार बारिश के प्रवाह से अभिसिंचित, रसवती और उर्वरा बनी धरती शस्य-श्यामल हो उठती है, चारों ओर फसलें लहलहाती हैं, खिल उठती है फूलों की घाटी, फूल-फूल उठते हैं वन-उपवन, जलाशयों में मुस्कुराते हैं कमल-कुमुद, खिल जाती हैं केसर-क्यारियाँ। अभ्रमुक्त आकाश में नक्षत्र-केलि करता चन्द्रमा रास रचाता है, सुधा-रस लिये बरसती है चाँदनी और आरम्भ हो जाता है कौमुदी-महोत्सव या शारदीय महारास।

पुराने दौर के आदिम ऋषि ने शरत् को लक्ष्य कर वर्ष की संकल्पना की थी जो कालान्तर में पक्ष-मास-दिवस आदि को समेटते हुए विभिन्न सभ्यताओं और संस्कृतियों द्वारा प्रवर्तित संवत्सर बन गयी। षड् ऋतुओं में विहार करती भारतीय संस्कृति ने अपनी विकास-यात्रा में ऋतु-पर्वों और उत्सवों की जीवन-परक संरचना की है। इनमें से अधिकांश लोक-जीवन को संस्कार एवं गति प्रदान करने वाले हैं जिनसे गतिशील रहा है हमारा अतीत और अनुप्राणित है वर्तमान।

मध्यकालिक आक्रमणों ने हमसे हमारा बहुत कुछ छीन लिया। ध्वस्त कर दिये अधिकांश ऐतिहासिक-सांस्कृतिक प्रतीक और प्रतिमान। किन्तु न बदल सकी हमारी प्रकृति, हम वही रहे और वही रहा हमारा मन-मस्तिष्क। इस दरम्यान बदलती रहीं सत्ताएँ, बदलती रहीं ऋतुएँ और इसी बीच बाह्य-परिवेश की पराजय-परक मन:स्थिति से उबरकर हमने पुन: आकाश-दीप जलाये, ऋतुओं का स्वागत किया। मध्यकालिक पुनर्जागरण के इस दौर में हमारे लौकिक ऋतु-उत्सव और उनसे जुड़े संस्कार एवं सारी ललित कलाएँ क्रमश: अलौकिक होते चले गये, इष्टदेवता को केन्द्र में रखकर रचा गया साहित्य, श्री चरणों में समर्पित होकर उद्‌बुद्ध हो उठी संस्कृति, नवजागरण की इस पवित्र ऊर्जा से उद्दीप्त हो उठा लोक-जीवन।

आश्विन मास के 'दशहरे' या विजय-दशमी से पहले शारदीय-नवरात्र में शक्ति-उपासना तो प्रचलित ही थी जिसे अंग्रेजों की गुलामी के दिनों में एक नया रूप मिला। लोकमान्य बालगंगाधर तिलक की प्रेरणा से बंगाल की 'दुर्गापूजा' और महाराष्ट्र की 'गणेश-पूजा' को सार्वजनिक-उत्सव के रूप में आयोजित करने का क्रम शुरू हुआ। इन उत्सवों में जनभागिता बढ़ने लगी, जनता के लोग जुड़ने लगे और यही जन-जुड़ाव बाद में जन-आन्दोलन का आधार बना। बंगाल और महाराष्ट्र पर 19वीं सदी के पुनर्जागरण का प्रभाव कहा जाय या उस मिट्टी का गुण कि इन प्रान्तों के पढ़े-लिखे लोग आज भी अध्ययनशील मनोवृत्ति के हैं, वे जीवन-यापन के किसी भी अनुशासन (अध्यापन, चिकित्सा, अभियांत्रिकी, व्यापार आदि) से जुड़े हों उनमें साहित्य के अध्ययन का आग्रह होता है, ललित कलाओं में उनकी अभिरुचि ही नहीं बल्कि गति होती है। इनमें बंगाल का एक और पक्ष है और वह है सतत आध्यात्मिक-अनुसंधान। यद्यपि यह हमारा राष्ट्रीय वैभव है तथापि पिछली तीन सदियों में हमारे राष्ट्रीय-जीवन के अनुप्रेरक, उद्‌बोधक महापुरुषों में सर्वाधिक व्यक्तित्व बंग-भूमि पर ही जन्मे हैं।

शेष पृष्ठ 2 पर

पृष्ठ 1 का शेष

आज भी बंगाल की इस शारदीय-नवरात्र की सार्वजनिक 'दुर्गापूजा' के प्रत्येक चरण में (स्थापना से विसर्जन तक) भक्ति-भाव हिलोरें लेता रहता है, पूजा की मर्यादा और गरिमा बनी रहती है। महाराष्ट्र के गणेश-उत्सव में भी हम इस भाव-गरिमा को देख सकते हैं।

इसी के समानांतर अपने हिन्दी-क्षेत्र की नकल-संस्कृति को देखकर क्षोभ होता है। यहाँ दुर्गा-पूजा, गणेश-उत्सव, रामलीला, रासलीला, मानस-पारायण, भागवत-सप्ताह आदि धार्मिक-अनुष्ठान व्यवसाय-परक होते जा रहे हैं। इनमें 'दुर्गा-पूजा' के पण्डाल-निर्माण से लेकर विसर्जन तक की प्रक्रिया में व्याप्त उच्छृंखलता साहित्य-संस्कृति-कला से विहीन पाशविक-मनोवृत्ति का दिग्दर्शन कराती है। कौन है इस उत्-जड (उजड्ड) या उच्छृंखल (उत्-श्रृंखल) मानसिकता के लिए जवाबदेह? कम-से-कम कबीर, तुलसी, भारतेन्दु, प्रसाद, प्रेमचंद, निराला और दिनकर का साहित्य ही कथित साक्षरता के नाम पर पढ़ा दिया जाय तो इस पशु-वृत्ति में पर्याप्त सुधार दिखने लगेगा और यह पशु-भाव क्रमशः साधना-क्रम के 'वीर' और 'दिव्य' भावों से अनुप्राणित हो उठेगा।

इस शरत्काल की पूर्णिमा के दिन प्राचीन 'कौमुदी महोत्सव' की लौकिक परम्परा तो विलुप्त हो गयी किन्तु शरद-पूर्णिमा लोकजीवन में आज भी धार्मिक-उत्सव के रूप में सुरक्षित है, इसी शरद की कार्तिक-अमावस है हमारा राष्ट्रीय आलोक-पर्व दीपावली जब पूर्णिमा के बाद चन्द्रमा की क्षीण होती कलाएँ अमावस की निशा में लोक-दीपों से जगमगा उठती हैं। प्रकृति के शारदीय-वैभव को समेटकर हम दूसरी ऋतु के स्वागत का उपक्रम करते हैं। माटी के दीपक की स्नेह-भरी बाती का आलोक घर-आँगन को जगमगा देता है। लोक-संस्कृति का यह नक्षत्र-लोक जन-जीवन को एक नयी ऊर्जा से भर देता है और वे नयी प्रेरणा के शिवसंकल्प के साथ अपने सत्कर्मों के आकाशदीप जलाते हैं। आओ कि—

शरत्चन्द्र का अमृत पीकर
नक्षत्र-लोक में रास रचायें
फिर दीप जलायें अंतर्तम के
स्नेह-भरे आलोक-दीप्त।

सर्वेक्षण

● **रक्षा-कवच :** पिछले दिनों की एक खबर के अनुसार धरती की सुरक्षा को सूरज से कोई खतरा नहीं है। वैज्ञानिकों की एक अन्तर्राष्ट्रीय संस्था के अध्ययन एवं निष्कर्ष से यह बात सामने आयी कि हमारी धरती का सौर-रक्षा कवच 'ओज़ोन' जो क्षतिग्रस्त होने लगा था वह अज्ञात पर्यावरणीय कारणों से पुनः बनने लगा है। राहत पहुँचाने वाली इस खबर को पढ़कर खुश होने के बजाय अच्छा होगा कि हम पर्यावरण की सुरक्षा के प्रति और जागरूक बनें और प्रकृति से मिलने वाले अनुदान—हवा, पानी, रोशनी और तमाम खनिज संसाधनों के अतिकृत्रिम दोहन की जगह उनका सचेतन भाव से प्राकृत उपयोग करें।

●● **हिन्दी के लिए :** विश्व-स्तर पर तीसरे स्थान पर बोली जाने वाली हमारी राष्ट्रभाषा हिन्दी को संयुक्त राष्ट्रसंघ की भाषा बनाने का खर्च वार्षिक तौर पर 66 करोड़ के लगभग है। अगर देखा जाय तो यह कोई बड़ी समस्या नहीं है। हज़ारों-लाखों करोड़ का बजट बनाने वाली केन्द्र सरकार भी स्वयं यह व्यय-भार उठा सकती है। यदि यह भी सम्भव नहीं तो हिन्दी-भाषी प्रदेशों की सरकारें मिल-जुलकर आपसी सहमति से इस निर्धारित खर्च के लिए अंशदान करें तो भी हमारी भाषा संयुक्त राष्ट्रसंघ की भाषा के रूप में मान्यता प्राप्त कर लेगी। अन्यथा प्रयत्न करने पर हिन्दी-परिक्षेत्र की जनता भी इतना व्यय वहन करने में सक्षम है।

●●● **चिर-प्रतीक्षित फैसला :** पिछले 18 सालों से इन्तजार था जिसका आखिर वह फैसला आ ही गया। अयोध्या के रामजन्मभूमि बनाम बाबरी-मस्जिद मुकदमे पर माननीय हाईकोर्ट ने सभी पक्षों की दलीलों, पुरातात्विक-साक्ष्यों आदि के आधार पर लगभग 15000 पृष्ठों का फैसला सुना दिया। इस फैसले की खूबी यह थी कि बहुलतावादी भारतीय संस्कृति के सभी पक्षों को सन्तुष्ट करने के लिए मुकदमे से सम्बन्धित दोनों पक्षों की भावनाओं-आस्थाओं के अनुसार उन्हें कुछ-न-कुछ प्रदान किया गया था। अतः दोनों वर्गों की तात्कालिक प्रतिक्रिया भी काफी सन्तुलित रही। यद्यपि कुछ असन्तुष्ट लोग सर्वोच्च-न्यायालय जाने की तैयारी कर रहे हैं फिर भी राष्ट्रीय-हित में अच्छा तो यह होगा कि मुकदमे से संबद्ध दोनों पक्ष एवं दोनों वर्गों के धर्माचार्य आपसी सहमति से सर्वसम्मत निर्णय करें और यथाशीघ्र इस उलझी हुई लोक-समस्या का समाधान करें। इस घड़ी याद आ रहे हैं संत तुलसीदास के कालजयी शब्द—

माँग के खाइबो मसीत को सोइबो
लेबे को एक न देबे को दोऊ॥

—परागकुमार मोदी

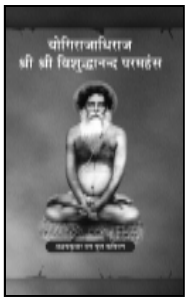

योगिराजाधिराज श्री श्री विशुद्धानन्द परमहंस

अक्षयकुमारदत्त गुप्त कविरत्न

अनुवादक

एस०एन० खण्डेलवाल

पृष्ठ : 396 पृ०

सजि. : रु० 400.00 ISBN : 978-81-7124-753-0
अजि. : रु० 225.00 ISBN : 978-81-7124-754-7

महान् साधक रायबहादुर अक्षयकुमारदत्त गुप्त प्रणीत 'योगिराजाधिराज श्री श्री विशुद्धानन्द परमहंसदेव' का भाषानुवाद प्रस्तुत है। यद्यपि पहले भी इन महायोगी की जीवनगाथा प्रकाशित हो चुकी है तथापि उनके जीवन के अनछुए प्रसंगों का तथा उनकी जीवन-यात्रा के सामान्य क्षणों का जो हृदयस्पर्शी विवरण इस ग्रन्थ में है, उसका वैसा स्वरूप अन्यत्र दृष्टिगोचर नहीं होता। महान् लोगों के जीवन की एक छोटी से छोटी घटना भी जनसामान्य के लिए पथप्रदीप का कार्य करती है। दिशाहारा व्यक्ति उसी से अपना मार्ग प्रशस्त कर लेता है। महापुरुष के जीवन की एक क्षुद्रतम घटना भी व्यर्थ नहीं होती तथा उससे भी मानव के हितार्थ सन्देश प्रसारित होता रहता है। यह निर्विवाद है।

यह ग्रन्थ एक दैनन्दिनी (डायरी) के समान है। महापुरुष की नित्यप्रति की घटनाएँ इसमें सँजोई गयी हैं। वर्णन-शैली रोचक तथा भावपूर्ण है। यह निश्छल-निष्कपट भाव का तथा भक्तिपूर्ण हृदय का उद्गार है। इस प्रकार के भाव सबके अन्तरतम का स्पर्श करते हैं, पाठक का संवेग भी लेखक के भाव में भावित तथा आकारित हो जाता है। यही यथार्थ जीवनी की, 'चरितकथा' की कसौटी है।

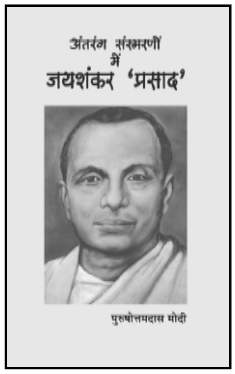

आकार डिमाई

पृष्ठ 176 + 8 पृष्ठ चित्र

सजिल्द : 81-7124-289-8 • रु० 150.00

(पुस्तक के एक अध्याय का अंश)

अंतरंग संस्मरणों में जयशंकर 'प्रसाद'

पुरुषोत्तमदास मोदी

'' साहित्यिक समारोहों से दूर रहने और मौन धारण करने वाले प्रसादजी को निज रूप से बहुत कम जाना गया। उनकी कोई जीवनी भी प्रकाशित नहीं हुई। उनके समकालीनों द्वारा लिखे गये विभिन्न संस्मरणों में प्रसादजी के जीवन की झलक मिलती है।''

जयशंकर प्रसाद

महादेवी वर्मा

महाकवि प्रसाद का जब-जब स्मरण आता है, तब-तब मेरे सामने एक ही चित्र अंकित हो जाता है।

हिमालय के ढाल पर उसकी गर्वीली चोटियों से समता करता हुआ एक सीधा ऊँचा देवदारु का वृक्ष था। उसका उन्नत मस्तक हिम-आतप-वर्षा से प्रहार झेलता था। उसकी विस्तृत शाखाओं को आँधी-तूफान झकझोरते थे और उसकी जड़ों से एक छोटी, पतली जलधारा आँख-मिचौनी खेलती थी। ठिठुराने वाले हिमपात, प्रखर धूप और मूसलधार वर्षा के बीच में भी उसका मस्तक उन्नत रहा और आँधी और बर्फीले बवंडर के झकोरे सहकर भी वह निष्कम्प निश्चल खड़ा रहा; पर जब एक दिन संघर्षों में विजयी के समान आकाश में मस्तक उठाए, आलोकस्नात वह उन्नत और हिमकिरीटिनी चोटियों से अपनी ऊँचाई नाप रहा था, तब तक एक विचित्र घटना घटी। जिस उपेक्षणीय जलधारा का प्रहार हल्की गुदगुदी के समान जान पड़ता था, उसी ने तिल-तिल करके उसकी जड़ों के नीचे खोखला कर डाला और परिणामत: चरम-विजय के क्षण में वह देवदारु अपने चारों ओर के वातावरण को सौ-सौ-ज्योतिश्चक्रों में मथता हुआ धरती पर आ रहा।

सभी महान् प्रतिभाशाली साहित्यकारों के जीवन में संघर्ष रहना अनिवार्य है; पर बड़े-बड़े संघर्ष उनकी जीवनी-शक्ति को क्षीणतम कर पाते हैं। यह कार्य तो ऐसी छोटी बाधाओं का सम्मिलित परिणाम होता है, जिनकी ओर वे सर्वथा उपेक्षा का भाव रखते हैं। प्रसादजी इसके अपवाद नहीं थे।

मेरे चित्र की पृष्ठभूमि में उनका साहित्य, मेरा कुछ घंटों का परिचय और कुछ प्रचलित स्तुतिनिन्दापरक कथाएँ ही हैं। छायावाद-युग की दृष्टि से उनके साहित्य से मेरा अपरिचय सम्भव नहीं था और स्थान की दृष्टि से प्रयाग से काशी दूर नहीं था; परन्तु कुछ अज्ञात कारणों से मैने उन्हें प्रथम और अन्तिम बार तब देखा, जब वे 'कामायनी' का दूसरा सर्ग लिख रहे थे और मैं 'सान्ध्य गीत' लिख चुकी थी। पर, उनका यह दर्शन भी न किसी अखिल भारतीय साहित्य-सम्मेलन के विवादी मेघ-गर्जन में हुआ और न किसी अखिल भारतीय कवि-सम्मेलन में सातों स्वर-समुद्रों के मंथन के बीच, न भाषण के अजस्र प्रवाह में, न फूल-मालाओं के घटाटोप में। काशी में उनका दर्शन अपनी कवित्वहीनता में विचित्र है।

भागलपुर से प्रयाग आते-आते मार्ग में जब-तब काशी पड़ जाती थी, एक बार प्रसाद के दर्शनार्थ ही मैंने कुछ घंटों के लिए यात्रा भंग की; पर मैं और मेरे साथ आने वाला नौकर दोनों ही काशी की सड़कों और गलियों से सर्वथा अपरिचित थे। कवि प्रसाद को सब जानते होंगे, इसी विश्वास से कई ताँगेवालों से पूछताछ की; पर परिणाम कुछ न निकला। निराश होकर जब स्टेशन के वेटिंग रूप में लौटनेवाली थी, तब एक ने प्रश्न किया—''क्या सुँघनी साहू के घर जाना है?''

सुँघनी साहु का रूढ़ अर्थ ग्रहण करने में मैं असमर्थ रही। समझा तम्बाकू के चूर्ण का बास लेनेवाले कोई साहूकार होंगे। फिर अर्थ को और स्पष्ट करने के लिए पूछा—''सुँघनी साहु क्या काम करते हैं?'' तम्बाकू की दुकान करते हैं, सुनकर ताँगे वाले पर अकारण ही क्रोध आने लगा। प्रसाद जैसा महान् कवि तम्बाकू की दुकानदारी जैसा गद्यात्मक कार्य कैसे कर सकता है। कुछ स्वगत और कुछ ताँगेवाले के अज्ञान कानों के लिए कहा, मुझे किसी तम्बाकू की दुकानवाले सेठजी के यहाँ नहीं जाना है, जिनके यहाँ जाना है वे कविता लिखते हैं। ताँगेवाला भी साधारण नहीं था, इसी से उसने परास्त न होने की मुद्रा में उत्तर दिया—''हमारे सुँघनी साहु भी बड़े-बड़े कवित्त लिखते हैं।'' तब मैंने सोचा—सम्भव है, ऐसे कवित्त लिखने में ख्यात सुँघनी साहु, प्रसाद जैसे कवि से अपरिचित न हों। स्टेशन पर कई घंटे बिताने से अच्छा है कि सुँघनी साहु से पता पूछ देखूँ।

आकाश को नीले कपड़े की चीरों में विभाजित कर देनेवाली काशी की गलियों में प्रवेश कर मुझे सदा ऐसा लगता है मानो मैं किसी विशालकाय अजगर के उदर में घूम रही हूँ, जिसने अपनी साँसों से मुझे ही नहीं, कुछ दुकानों को भी अपने भीतर खींच लिया है और अब बाहर आने का एकमात्र द्वार उसका मुख बन्द हो गया है।

अन्त में जहाँ तक ताँगा जा सका वहाँ तक ताँगे में, उसके उपरान्त कुछ दूर पैदल चलकर हम एक सफेद पुते हुए मकान के सामने पहुँचे जो अतिसाधारण और असाधारण के बीच की मध्यम स्थिति रखता था। कहलाया, प्रयाग से महादेवी आई हैं। सोचा यदि गृहस्वामी प्रसादजी ही होंगे तो मेरा नाम उनके लिए सर्वथा अपरिचित न होगा और यदि कोई सुँघनी साहु ही हैं तो शिष्टाचार के नाते ही बाहर आ जायँगे।

प्रसादजी स्वयं ही बाहर आये। उनका चित्र उन्हें अच्छा हृष्ट-पुष्ट स्थविर बना देता है, पर स्वयं न वे उतने हृष्ट जान पड़े और न उतने पुष्ट ही। न अधिक ऊँचा न नाटा—मझोला कद, न दुर्बल, न स्थूल, छरहरा शरीर, गौर वर्ण, माथा ऊँचा लिये मुख, मुख की तुलना में कुछ हल्की सुडौल नासिका, आँखों में उज्ज्वल दीप्ति, ओठों पर अनायास आनेवाली बहुत स्वच्छ हँसी, सफेद खादी का धोती-कुरता। उनकी उपस्थिति में मुझे एक उज्ज्वल स्वच्छता की वैसी अनुभूति हुई जैसी उस कमरे में सम्भव है, जो सफेद रंग से पुता और सफेद फूलों से सजा हो।

उनकी स्थविर जैसी मूर्ति की कल्पना खंडित हो जाने पर मुझे हँसी आना ही स्वाभाविक था। उस पर जब मैंने अनुभव किया कि प्रसादजी ही सुँघनी साहु हैं तब हँसी ही रोकना असम्भव हो गया। उन दिनों मैं बहुत अधिक हँसती थी और मेरे सम्बन्ध में सब की धारणा थी कि मैं विषाद की मुद्रा और डबडबाई आँखों के साथ आकाश की ओर दृष्टि किये हौले-हौले चलती और बोलती हूँ।

मेरी हँसी देखकर या मुझे मेरे भारी-भरकम नाम के विपरीत देख कर प्रसादजी ने निश्चल हँसी के साथ कहा—''आप तो महादेवी जी नहीं जान पड़ती।'' मैंने भी वैसे ही प्रश्न में उत्तर दिया—''आप ही कहाँ कवि प्रसाद लगते हैं जो चित्र में बौद्ध भिक्षु जैसे हैं।''

उनकी बैठक में ऐसा कुछ नहीं दिखाई दिया जिसे सजावट के अन्तर्गत रखा जा सके। कमरे में एक साधारण तख्त और दो-तीन सादी कुर्सियाँ, दीवाल पर दो-तीन चित्र, अलमारी में कुछ पुस्तकें। यदि इतने महान् कवि के रहने के स्थान में मैंने कुछ असाधारणता पाने की कल्पना की होगी तो मेरे हाथ निराशा ही आई।...

प्राप्ति स्थान

विश्वविद्यालय प्रकाशन ,चौक, वाराणसी

www.vvpbooks.com

हिन्दी का बदलता स्वरूप

—सुनील कुमार मानव

आज हिन्दी को लेकर तमाम प्रश्न उठाए जा रहे हैं। उसको राष्ट्रभाषा का दर्जा दिलाने का प्रयास किया जा रहा है और साथ-साथ अंग्रेजी के सापेक्ष रखकर उसकी मौखिक वकालत की जा रही है। एक बार एक सहित्यिक पत्रिका में लिखा गया था—''14 सितम्बर को प्रतिवर्ष हिन्दी दिवस मनाया जाता है।.....श्राद्ध पक्ष में जैसे ब्राह्मणों को ढूँढ-ढूँढ कर भोजन कराया जाता है उसी तरह हिन्दी दिवस, सप्ताह या पखवाड़े में हिन्दी के विद्वानों को ढूँढ-ढूँढ कर व्याख्यान देने और पुरस्कार वितरण करने के लिए आमन्त्रित किया जाता है।'' यह वक्तव्य हिन्दी के खोखले प्रेमियों की खोखली मानसिकता पर ही प्रकाश डालता है। इन लोगों में हिन्दी के प्रति निष्ठा या प्रेम का भाव कम ही होता है। वस्तुत: जो लोग हिन्दी का रोना रोते देखे जाते हैं उन्हें हिन्दी की वास्तविकता का ज्ञान शायद ही हो। वास्तव में जिसे हम हिन्दी कहते हैं उसमें 17 बोलियों का समाहार है। इनमें कन्नौजी, खड़ी बोली, ब्रज, बांगरू, बुंदेली, अवधी, मारवाड़ी, भोजपुरी, मैथिली, गढ़वाली आदि शामिल हैं। इस प्रकार हमारे सामने जो हिन्दी है वह वस्तुत: इन्हीं 17 बोलियों का मिश्रण है। कहने का तात्पर्य यह कि हिन्दी की सीमा इतनी विस्तृत है कि बहुत बार हम हिन्दी पर बहस करते समय यह भूल जाते हैं कि वास्तव में हिन्दी है क्या? दरअसल, जब हम हिन्दी कह रहे होते हैं तो 'हिन्दी' से मतलब उस मानक भाषा से होता है जो हमारे संविधान में स्वीकृत है, लेकिन जिस हिन्दी को हम मानक भाषा बनाना चाह रहे हैं वह बहुत पुरानी नहीं है। इससे निष्कर्ष निकलता है कि भाषा का स्वरूप कभी स्थिर नहीं रहता, वह बदलता रहता है। भाषा एक जल प्रवाह की तरह है। जिस तरह रुका हुआ पानी सड़ जाता है उसी तरह यदि हम भाषा को बाँधने की कोशिश करेंगे तो वह नष्ट हो जाएगी। भाषा एक बहता नीर है, जिसमें बहुत सारी चीजें घुलेंगी, बहुत सारी चीजें मिलेंगी और घुल-मिलकर एक नए रूप का निर्माण करेंगी। अब यह हमारे ऊपर है कि हम कौन-सा रूप देखना चाहेंगे? हम पुराने से ही चिपके रहना चाहते हैं या नए से भी रूबरू होना चाहेंगे?

कालिदास ने कहा है कि ऐसा नहीं है कि जो पुराना है वह सब अच्छा है और जो नया है वह सब बुरा है। उसको देखने के लिए एक दृष्टि चाहिए कि क्या अच्छा है और क्या बुरा है! हम जानते हैं कि पहले एक दौर में संस्कृत हमारे यहाँ प्रचलन में थी, फिर पालि आई, प्राकृत, अपभ्रंश और अवहट्ट से होते हुए हिन्दी बनी। इस प्रकार संस्कृत से हिन्दी तक भाषा का रूप बदलता रहा। आज हिन्दी के पक्ष में तमाम दलीलें दी जाती हैं, लेकिन शायद ही कोई ऐसा व्यक्ति हो जो केवल हिन्दी के ही शब्दों का प्रयोग करता हो! हम इंग्लिश का हिन्दी अनुवाद करते हैं 'अंग्रेजी', लेकिन यह शब्द भी हिन्दी का नहीं है। हिन्दी में तो उसको 'आंग्लभाषा' कहा जाता है। हम सब कहते हैं 'अंग्रेजी'! यह शब्द है फ्रांसीसी भाषा का। हम प्रयास करते हैं कि हिन्दी बोलें, उसकी प्रतिष्ठा करें, लेकिन वह कौन-सा सुराख है जहाँ से ये भाषाएँ हमारी हिन्दी भाषा में स्वत: ही घुस आती हैं और हम मजबूर हो जाते हैं उनको अपनाने के लिए। ऐसे बहुत सारे शब्द हैं जिनका हिन्दी अनुवाद नहीं है। जैसे कुछ रोचक शब्द लें—बर्फी, जलेबी, समोसा आदि। ये शब्द अरबी-फारसी के हैं। इनके लिए हिन्दी में कोई शब्द नहीं है। अब यह कहें कि नहीं साब अब हम समोसे के लिए एक नया शब्द खोजेंगे, क्रिकेट का हिन्दी नाम रखेंगे तो यह हमारी भूल होगी, क्योंकि भाषा जीवंत होती है। पाणिनि ने देवताओं की वाणी यानी देववाणी को 14 सूत्रों में बाँध दिया। भगवान ने इस भाषा का निर्माण किया था, शिव के डमरू से उसका जन्म हुआ था। फिर वह मृतप्राय क्यों हो गई? अगर बची है तो अखबारों अथवा विश्वविद्यालयों में। वह भी नुमाइश के तौर पर। उसका दैनिक जीवन में कोई उपयोग नहीं बचा है। आखिर क्यों?

इसका मतलब बस यही है कि भाषा रुकती नहीं है, वह लगातार प्रवाहित होती रहती है। ऐसे में हम तमाम कोशिशों के बावजूद उसका प्रवाह नहीं रोक सकते। हमें उसकी उन्नति के लिए उसी दिशा में जाकर कोशिश करनी होगी। हमने हिन्दी में दूसरी भाषाओं के लगभग पाँच हजार शब्द अपनाए हैं। जिन शब्दों को हम अपने व्यावहारिक जीवन में प्रयोग करते हैं, जिनके माध्यम से हम अपनी उद्भावनाओं को प्रकट करते हैं, उनकी शब्द-सीमा 2-3 हजार से ज्यादा नहीं होगी और उन शब्दों में बहुत सारे शब्द ऐसे हैं जो हिन्दी के नहीं हैं। कालीन, कैंची, कुली, चाकू, चम्मच, तोप, दरोगा, बहादुर, बेगम, लाश, लफंगा (तुर्की); अदालत, अक्ल, आदमी, इनाम, इलाज, औरत, किस्मत, किताब, कुर्सी, जहाज, जलेबी, दवा, दिमाग, दुकान, दुनिया, नहर, नकल, शराब, हलवाई (अरबी) आतिशबाजी, आवारा, कारीगर, किशमिश, कुरता, गुलाब, पाजामा, बर्फी, मलाई, मकान, सरदार, समोसा (फारसी); चाय, लीची (चीनी), गमला, आलपिन, पपीता, पादरी, अलमारी (पुर्तगाली) आदि तमाम शब्द विदेशी भाषाओं से हिन्दी में इस प्रकार घुल-मिल गए हैं कि उनकी जगह पर कोई अन्य शब्द रखा ही नहीं जा सकता है। अन्त में यही कह सकते हैं कि हिन्दी का जो रूप विकसित हो रहा है हमें उसमें अटकलें लगाने के बजाय उसके बदलते हुए स्वरूप को अपनाना चाहिए। ऐसा करते हुए यह बिलकुल नहीं समझना चाहिए कि हिन्दी में दूसरी भाषाओं के बढ़ते शब्दों से हिन्दी का ह्रास हो रहा है, बल्कि यह समझना चाहिए यह उसकी समाहार शक्ति ही है जो दूसरी भाषाओं को अपनी ओर आकर्षित कर रही है। यह हिन्दी की विजय ही है कि विदेशी कम्पनियाँ भी अपना प्रचार-प्रसार हिन्दी में ही कर रही हैं। **—दैनिक जागरण से साभार**

ऐसे जन्मा किताबी जासूस

लम्बा कद, दरम्यानी काठी, गठीला चेहरा, लम्बी नाक, ओवर कोट, सिर पर कभी कैप, कभी एक जेब में पिस्तौल भी, होठों में दबी पाइप, आँखें इर्द-गिर्द सूँघती हुई—एक अंग्रेज जासूस, नाम शरलॉक होम्स। लेखक सर आर्थर कानन डायल ने तो अपनी जासूसी कहानियों के बलबूते पर जासूस शरलॉक होम्स को पैदा कर दिखाया। वह दुनिया का इकलौता काल्पनिक चरित्र था, जो किताबों के पन्नों से निकल कर सचमुच की जिन्दगी जिया। सर आर्थर कानन डायल ने सन् 1887 में जासूस शरलॉक होम्स का खाका खींचा या कहिए पैदा किया। पहला उपन्यास था 'ए स्टडी इन स्कार्लेट।' शोहरत बटोरी 1891 में 'ए स्कैंडल इन बोहमिया' से।

यह उपन्यास 'स्ट्रैंड मैगजीन' में धारावाहिक छपा। फिर अर्से बाद, एक रोज कानन ने सोचा-बहुत हो गया, शरलॉक होम्स को मार देता हूँ और 1903 में उसने अपने उपन्यास 'द फाइनल प्रोब्लम' में वाकई जासूस को स्विट्जरलैंड के फाल्स किनारे मार डाला। अपने प्रिय जासूस की मौत की खबर लोगों को हजम नहीं हुई। लोगों का हुजूम सड़कों पर उतर आया। कल्पना की किताबी दुनिया में किसी करेक्टर को लेकर ऐसी दीवानगी आज तक नहीं सामने आई। लेखक को शरलॉक होम्स को फिर जिन्दा करना पड़ा।

हिन्दी के सर आर्थर कानन डायल का रुतबा रहा गोपाल राम गहमरी का। कम ही लोग जानते हैं कि गोपाल राम गहमरी ने ही एक जमाने में मेरठ से पहला जासूसी मासिक पत्र 'गुप्त कथा' शुरू किया था। उन दिनों, वह 'साहित्य सरोज' के सम्पादक भी थे। फिर गहमर आकर, उन्होंने 'जासूस' मासिक पत्र छापा। 'जासूस' ऐसा चला कि उन्हें हर महीने एक जासूसी उपन्यास लिखना पड़ा। उन्होंने करीब 200 जासूसी उपन्यास लिखे, जिनमें 'अद्भुत लाश', 'गुप्तचर', वगैरह उल्लेखनीय हैं। उनके जासूसी कहानी संग्रह 'हंसराज की डायरी' आदि भी खूब पसन्द किए गए।

आकार डिमाई *पृष्ठ* 164

सजिल्द : रु० 80.00

किरात नदी में चन्द्र मधु

कुबेरनाथ राय

''हिन्दी साहित्य के लब्धप्रतिष्ठ साहित्यकार कुबेरनाथ राय के ललित निबन्धों के प्रसिद्ध संग्रह 'किरात नदी में चन्द्र मधु' में से चुने गये विशिष्ट निबन्ध का एक अंश।''

(पुस्तक के एक अध्याय का अंश)

भारतीय किरात

(1)

मैं चौकन्ना हो गया।

देखते-देखते खरगोशों का एक दल एक ओर निकल गया और पास ही सरकण्डे और घने मूँज के वन में घुस गया। फिर तत्काल ही आ पहुँचे लम्बी जीभें निकाले पीछे तेज़ गति से दौड़ते हुए श्वान और कुत्तों के पीछे-पीछे वैसी ही तेज गति वाली अशुभ मानव-आकृतियाँ। उनके कन्धे पर बाँस की लम्बी लाठियाँ थीं अथवा पतले बाँस के डण्डों बँधे लौह फलक वाले 'सूली' अस्त्र तो हाथ द्वारा वेग से हवा में फेंके जाते हैं। किसी-किसी के हाथ में तेजधार 'दाव' भी थे। उन आकृतियों के कण्ठों में एक अद्‌भुत ललकार थी जिसका शब्दगत रूपान्तर मैं नहीं कर पाया, यद्यपि भाव तो स्पष्ट ही था। सबके पीछे उतनी ही तेज गति से दौड़ता हुआ हाथ में 'दाब' उठाकर ललकारता हुआ चल रहा था एक किशोर जिसके माथे पर रंगीन गमछा बँधा था और कटि में चटक पीले और काले रंग की मिश्रित बुनावट वाला परिकर था। बीसवीं शती की होने के प्रमाण-स्वरूप उसकी देह में एक छींटदार पुरानी बुशर्ट भी थी। शायद वह टोली के सरदार का लड़का था। वे व्याधगण ऊँची-नीची ऊबड़-खाबड़ भूमि पर बेपरवाह दौड़ रहे थे। मुझे लगा कि वे पाताल के फाटक से अभी-अभी बाहर निकल कर ऊपर धरती पर आये हैं और शायद इसी वेग से देश-काल में निरन्तर दौड़ते चले जायेंगे धरती के अन्तिम छोर तक और बीसवीं शताब्दी के अन्तिम छोर तक। बाद में ज्ञात हुआ कि ये भारतीय किरात-वंश की बोडो-कछारी शाखा के प्रतिनिधि हैं जो हजारों वर्षों से भारतीय सभ्यता में दाखिल हो जाने के बावजूद आंशिक रूप से अपनी आदिम आरण्यक वृत्तियों को बचाकर चल रहे हैं, छोड़ नहीं पाये हैं, लद्दाख से अरुणाचल तक हिमालय से नागालैण्ड तक। सारे इतिहास में भारतीय किरात निरन्तर धावमान है। परन्तु अब और नहीं। इस शताब्दी का अन्त होते-होते इसके चरण थक जायेंगे और हमें आशा है कि यह भी शेष भारत की डिजाइन में आ जायेगा, बिना अपना चेहरा बदले या अंग-भंग किये। प्रक्रिया तो शुरू हो गयी थी, परन्तु हजार वर्ष का मध्यकाल बीच में व्यवधान डाल गया। परन्तु 1947 ई० से पुन: चालू हो गयी है। यद्यपि इस बार इसका वाहन धर्म-मोक्ष नहीं, अर्थ-काम है और इसका उद्देश्य आत्मसात्करण नहीं, सर्वोदय है।

मैंने देखा, किरात दल पास ही में रुक गया है। कुछ मूँज के जूटों को बाँसों से पीट रहे थे, चारों ओर घेर कर कुत्ते भूँक रहे थे, वह किशोर तो रोम-रोम चौकन्ना था, गोया साँप का बच्चा हो, चारों ओर घूम-घूम कर तरह-तरह के आदेश दे रहा था और मुझे लगा कि उसकी हिंसा के उल्लास में चमकती आँखें, उसकी तेज छिप्र गति, उसका चित्र-विचित्र अधोवस्त्र, उसके माथे का रंगीन गमछा, सब कुछ प्रतीकात्मक है। किरात संस्कृति ही रंग-बिरंगी है। यह एक बहुरूपी संस्कृति है। यह एक कामरूपी, इच्छा-वपुधारिणी संस्कृति है। आधुनिकता का रंग या तो धीर-गम्भीर होता है, नहीं तो उदास और रंगहीन। काला और सफेद। धूसर और धूमिल। आधुनिकता के ये रंग हैं। परन्तु किरात मन और किरात जीवन अब भी आदिमता धारण किए हुए चल रहा है, अब भी वह उच्छृंखल, उद्दाम, उल्लासमय और पूँछ उठाकर नाचनेवाला है। उसमें अब भी वर्ण-वैचित्र्य है, रूप-वैचित्र्य है, मायावीपन है, भोलापन है, उत्तेजना है और उत्तेजक क्रूर भोग भी है। वह आज भी आरण्यक अन्तराल के किसी न किसी कोने में रंग-बिरंगे अजगरों, चीतल मृगों और चित्रव्याघ्रों का सगोत्र है। अवश्य ही सर्वत्र नहीं। उदाहरण के लिए यह लड़का चन्द्रकछाड़ी (जिसका नाम-धाम मैंने बाद में पूछ कर ज्ञात किया) एकान्त आरण्यक भारत की किरात संस्कृति का प्रतिनिधि नहीं है। यह तो 'शालीन' किरात है। हाईस्कूल में पढ़ता है। जनजातीय छात्रवृत्ति पाता है। बुशर्ट पहनता है। घर खेती-बारी होती है। मूँगा-एण्डी का व्यवसाय होता है। यह तो शालीन किस्म का असमिया किरात है। तो भी यह उन्हीं का आधुनिक प्रतिनिधि। मुझे उसके शरीर पर फहराता हुआ रंगीन गमछा किरात संस्कृति की बहुवर्णी माया-चुनरी जैसा लगा। परन्तु यदि असल किरात और किरात मृगया के दृश्य देखना हो तो चले जाओ नागालैण्ड और सुरमा नदी की घाटी के भीतरी अंचलों में, सोमेश्वरी-तट के गारो अंचल में अथवा चन्दन-देवदारु और गम्हार के वनों से ढँके अरुणाचल के भीतरी इलाकों में। इन क्षेत्रों में अब भी ऐसे अंचल हैं जिनकी धरती पर आदिम काल से सूर्य की रोशनी नहीं पड़ी है, जिनकी एक कंछी भी मानव-शस्त्रों की तीक्ष्ण धार से नहीं कट पायी है, जहाँ कुमारिका प्रकृति का अक्षत कौमार्य सुरक्षित है और शताब्दियों से आ रहे लोक-विश्वास के अनुसार ये वन देवताओं की विहार-भूमि है और मनुष्य के लिए निषिद्ध लोक हैं। ऐसे औघट घाट पर पहुँच कर देखोगे कि चन्द्र कछाड़ी जैसा ही एक किशोर खड़ा है जनजातीय प्रकृति-कुमार के वेश में। शीष पर वानर-कपाल की स्वर्णधूसर टोपी है। टोपी में वनशूकरों के दाँत वक्र चक्राधार शैली में अगल-बगल लगे हैं, कानों में सफेद शंख वलय हैं, कर्ण छिद्रों में सींग की बालियाँ हैं जो किसी किशोर मृग की खोपड़ी से उखाड़ ली गयी हैं, बाहों और पिण्डलियों में लोहे के कंकण और रंगीन बेतों की पट्टियाँ हैं, कमर में लाल वल्कल का परिकर है, जिसमें कौड़ियों की माला गुँथी है, झालर पर झालर, जो आदिम संस्कृति के नरकपालों की माला का सौम्य और आधुनिक संस्करण है। यदि वह 'नागा' किशोर सांध्य नृत्य की तैयारी में रत है तो उसके शीश पर कर्ण-मुकुट होगा, उत्तर भारतीय दूल्हे के सिर पर सजी 'मौरी' पुष्पों के मौर की भाँति। उस पर्णमुकुट को केले के हरित गुम्फों और मुर्गे की पाँखों से सजाया गया है। कानों पर लाल या नारंगी रंग के जंगली फूल और मुकुट के अगल-बगल मेंडर में लगे जंगली पशुओं के दो सींग। गले में कौड़ियों की झनकती हुई माला और हाथ 'जाठी' (नगा-बर्छा) जिसे वह हवा में घुमाते हुए और कंकरीली धरती की खोपड़ी पर नग्न पदाघात करते हुए जब युवा समूह के साथ शिकार नृत्य करने लगता है तब आस-पास की धरती और आसमान चले जाते हैं अनेक शताब्दियों पीछे, आदिम अरुणोदय और आदिम संध्याओं के युग में। किरात ने यह चित्र-विचित्र शृङ्गार प्रकृति की अन्य सन्तानों से क्रूरतापूर्वक छीना है। किसी की खोपड़ी उखाड़ ली और टोपी बना ली, किसी का वध करके सींग और दाँत के लिए शिरोभूषण बनाने के लिए, तो किसी की देह की छाल ही उतार ली कटिवस्त्र या पादत्राण बनाने के लिए।...

प्राप्ति स्थान

विश्वविद्यालय प्रकाशन ,चौक, वाराणसी

www.vvpbooks.com

सती प्रथा और जौहर का मूल सत्य

—प्रो० अभिराज राजेन्द्र मिश्र
पूर्व कुलपति, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी

आज के युग की अनेक क्रान्तिकारी घटनाओं की जड़ प्राचीन भारतीय पुराकथाओं (माइथॉलोजी) में प्रतिष्ठित मिलती है। ऐसे ही सन्दर्भ हैं सतीप्रथा एवं जौहर के। प्राचीन भारतीय-साहित्य में, विशेषत: पुराणों तथा रामायण, महाभारत में विधवा महिला के पति की चिता पर जल मरने की परम्परा का उल्लेख है। वस्तुत: यह 'इच्छामरण' का एक समाज-सम्मत रूप था। न यह कोई रूढ़ सामाजिक परम्परा थी, न यह कोई शास्त्रदेशना थी। पति के साथ चिता पर बैठ कर पत्नी का प्राण त्याग करना, विशुद्ध रूप से उसका व्यक्तिगत निर्णय होता था। पति को परमेश्वर मानने वाली भारतीय नारी को, पति के विछोह में, अपना जीवन निरर्थक, निष्प्रयोजन, भारभूत तथा निरानन्द प्रतीत होता था। फलत: वह चितारोहण का निर्णय ले लेती थी। समाज भी निषेध नहीं कर पाता था दाम्पत्य-सम्बन्ध के अविनाभाव के प्रति नतशीर्ष होने के कारण।

महाराज दशरथ की मृत्यु के बाद महारानी कौशल्या को भी जीवन निस्सार लगने लगता है तथा वह भी पति के साथ ही प्राण त्याग देना चाहती हैं—

भर्तारं तु परित्यज्य का स्त्री दैवतमात्मनः।
इच्छेज्जीवितुमन्यत्र कैकेय्यास्त्यक्तधर्मणः॥
—अयोध्या० 66.5

साहमद्यैव दिष्टान्तं गमिष्यामि पतिव्रता।
इदं शरीरमालिङ्ग्य प्रवेक्ष्यामि हुताशनम्॥
—अयोध्या० 66.12

तां ततः सम्परिष्वज्य विलपन्तीं तपस्विनीम्।
व्यपनिन्युः सुदुःखार्तां कौसल्यां व्यावहारिकाः॥
—अयोध्या० 66.13

उपर्युक्त सन्दर्भ में स्पष्ट हो जाता है कि विधवा का चितारोहण भारत में कभी भी अनिवार्य-प्रथा नहीं रहा। वस्तुत: यह महिला का व्यक्तिगत निर्णय था जिसका मूलाधार था पति के प्रति उसके प्रगाढ़ आत्मिक अनुराग एवं आसक्ति की सान्द्रता, घनीभूतता। प्रकृति की दृष्टि से यद्यपि चितारोहण आत्महत्या के ही समान था तथापि दोनों में महान अन्तर था। दोनों ही स्थितियों में जीवन की निस्सारता, व्यर्थता एवं तुच्छता का आत्यन्तिक बोध होता था। परन्तु आत्महत्या के मूल में जहाँ उद्वेग, प्रतीकाराक्षमता, असह-सन्ताप, नैराश्य तथा निर्गतिकता का भाव प्रबल होता था वहीं चितारोहण में आत्मतृप्ति, धर्मपालन, अखण्डानन्द, आस्था एवं आत्मतोष का भाव था। आत्महत्या जहाँ संघर्षों, अत्याचारों से पराजित होने का परिणाम थी, वहीं चितारोहण अगली जीवनयात्रा का मंगल-घोष-सरीखा कार्य था।

रामायण के उपर्युक्त सन्दर्भ से स्पष्ट है कि चितारोहण का निर्णय लेने के बाद भी महारानी कौसल्या व्यावहारिकों (अमात्यों) के समझाने-बुझाने तथा प्रार्थना करने से विरत हो जाती हैं।

इससे यह भी स्पष्ट हो जाता है कि महिलाओं के चितारोहण के पीछे देश, काल और व्यक्ति का भी बहुत बड़ा हाथ होता था। पूर्व तथा उत्तर मध्यकाल में राजस्थान में जौहर की लोमहर्षक परम्परा थी। मुस्लिम आक्रान्ताओं के हाथ लगने से पूर्व ही राजपूत क्षत्राणियाँ चिता की आग में कूद कर नामशेष हो जाती थीं।

बंगाल के नृशंस धार्मिक ठेकेदारों ने वैधव्य को धर्म से जोड़ रखा था। फलत: मृत पति के साथ विधवा का भी जल मरना उन्हें वैध प्रतीत होता था। इस दुस्संकल्प के कारण ही वहाँ चिरकाल तक विधवा का चितारोहण एक रूढ़, अनिवार्य परम्परा बना रहा। अन्तत: राजा राममोहन राय ने सन् 1829 ई० में वायसराय विलियम बेण्टिक से कानून बनवा कर इस अमानवीय कुरीति पर रोक लगवाई।

महाभारत में मृत महाराज पाण्डु के साथ माद्री के चितारोहण का वर्णन है। परिवर्तित सन्दर्भ में, हम देवी जानकी के चितारोहण का भी वृत्त पाते हैं रामायण में। महाकवि बाण ने हर्षचरित आख्यायिका में महाराज प्रभाकरवर्धन के साथ रानी यशोमती तथा उनकी अनेक दासियों के जल मरने का वर्णन किया है। मुगल सेनापति राणा मानसिंह के मरने पर उनकी रानियों ने भी चितारोहण किया था। परन्तु चितारोहण के इन सारे सन्दर्भों में एक ही तथ्य उभर कर आता है कि इस कार्य में कोई जोर-जबर्दस्ती नहीं थी। चितारूढ़ महिलाओं के प्रति समाज में अपार श्रद्धा एवं देवत्व का भाव पैदा हो जाता था। उनके मन्दिर तक बन जाते थे, उपासना होने लगती थी तथा चितारोहण-भूमि को तीर्थ की प्रतिष्ठा तक प्राप्त हो जाती थी।

परन्तु चितारोहण 'सती होने' का पर्याय कब और कैसे बन गया, यह एक महत्त्वपूर्ण तथ्य है। जब कि इन दोनों घटनाओं में कहीं कोई अन्त:सम्बन्ध नहीं। कालक्रम की दृष्टि से भी दोनों पृथक् हैं। सती दक्षप्रजापति की पुत्री तथा भगवान् शिव की प्रथम पत्नी का नाम है। शिव एवं दक्ष (जामाता एवं श्वसुर) का वैमनस्य सर्वविदित है। दक्ष स्वभावत: शिवद्रोही था, इसीलिये उसने अपने यज्ञ में शिव को निमन्त्रित नहीं किया। शिव के निषेध करने पर भी देवी सती, मातृकुल के मोहवश अकेली ही चली गईं उस यज्ञ में। परन्तु देवाधिदेव शम्भु को उस यज्ञ में हविष्य-वंचित एवं अपमानित देख वह रोष से भर उठीं तथा उन्होंने यज्ञकुण्ड की प्रज्वलित अग्नि में ही कूद कर आत्मदाह कर लिया।

यह एक सहज एवं स्वाभाविक घटना है जिसका वर्णन अनेक रामकथा ग्रन्थों एवं पुराणों में है। कुछ स्थलों पर यज्ञाग्नि में शरीरदाह के स्थान पर 'योगाग्नि से शरीर को भस्म' करने की बात कही गई है। इस पुराकथा का महत्त्वपूर्ण बिन्दु है—पति की अवमानना से क्षुब्ध एक पतिव्रता स्त्री का पिता के प्रति असीम अमर्ष एवं आक्रोश तथा पिता के प्रति दण्डात्मक प्रतिक्रिया में आत्मदाह! देवी सती ने अनुभव किया कि लोकवंद्य पति की उपेक्षा, अवमानना एवं तिरस्कार को प्रत्यक्ष देखने के बाद, अब उनका जीवित रहना व्यर्थ है।

इस प्रकार, पति की प्रतिष्ठा के लिये सती का प्राण त्याग देना व्यक्तिगत घटना होते हुए भी, नारियों के लिये एक अनुकरणीय आदर्श बन गया। 'एक' सती का प्राणत्याग करना, उत्तरोत्तर नारियों की पतिनिष्ठा का प्रमाण बनता गया। जब वैयक्तिक घटना का समाजीकरण हो गया तो **'सती होना'** एक क्रिया बन गई जिसका अभिप्राय था पति की प्रतिष्ठा के लिये जीवित जल मरना।

अर्थविस्तार के इसी क्रम में 'चितारोहण तथा सती होना' इन दोनों घटनाओं में तादात्म्य स्थापित हो गया। यद्यपि देवी सती ने पति के जीवित रहते आत्मदाह किया था उनके अपमान से क्षुब्ध होकर। जबकि चितारोहण में महिला पति की मृत्यु के बाद आत्मदाह का निर्णय लेती थी। इस दृष्टि से भी दोनों घटनाओं में प्रभूत अन्तर है। तथापि सती होना चितारोहण का पर्याय बन गया मात्र इसलिये कि पति की सामाजिक लांछना, सार्वजनिक तिरस्कार भी उसकी मृत्यु ही है (संभावितस्य चाकीर्तिर्मरणादतिरिच्यते—गीता) अपमानित, गर्हित, लांछित पति भी 'मृत' ही है। ऐसी स्थिति में कोई यशस्विनी पतिव्रता रमणी क्यों जीना चाहेगी?

सती होने अथवा (मृत) पति के साथ अपना ही अस्तित्व मिटा देने का यह इतिहाससम्मत विवरण पूरी 'सतीप्रथा' को स्पष्ट कर देता है। वस्तुत: सती शब्द प्रतीक बन गया असीम कष्ट-व्यथा सहने का अथवा निष्ठा के निर्वाह करने का। समाज में इसके नित्यप्रति उदाहरण मिल जाते हैं। भरी जेठ की दुपहरी में खेत में फावड़ा चलाते भाई या बेटे से कोई भी व्यक्ति कह देता है—काहे **सती** हो रहे हो इस धूप में? कोई मित्र मित्र से कह सकता है—अब साथ नहीं छोड़ूँगा। तुम्हारे साथ **सती** हो जाऊँगा। कोई सास कभी भी बहू को ताना मार सकती है—हाँ हाँ, अब एक तुम्ही **सती** बची हो इस कलियुग में? या मनचली पड़ोसन पर तीर चला सकती है—जैसी **सती**-सावित्री हो तुम, सब पता है मुझे! क्रिया (दु:ख

झेलना) के रूप में 'सती' होने का सम्बन्ध केवल महिला से ही नहीं, प्रत्युत किसी से भी हो सकता है। कोई कह सकता है आवारा लड़के से—बेचारा बूढ़ा बाप **सती** हो रहा है खेत में, और तुम ताश खेल रहे हो? इस प्रकार **सती** शब्द की अनेक अभिव्यक्तियाँ हैं।

एक देवी सती से जुड़ी घटना एक सामाजिक परम्परा बन गई कालप्रवाह में। ठीक इसी प्रकार, पाँच पाण्डव बन्धुओं के सामूहिक रूप से जल मरने की घटना **'सामाजिक सामूहिक आत्मदाह'** का पर्याय बन गई, जिसे उत्तर मध्यकाल में 'जौहर' कहा गया।

यह जौहर क्या है? हिन्दी में सामर्थ्य नहीं इस शब्द का निहितार्थ स्पष्ट करने का। परन्तु संस्कृत इसका मर्म समझा सकती है भाषा-विज्ञान के सहारे! पाण्डवद्वेषी दुर्योधन ने, शकुनि की प्रेरणा से, पाण्डव-बन्धुओं की हत्या का उपाय सोचा। उसने अपने विश्वस्त पुरोचन को इसका दायित्व सौंपा। दुष्ट पुरोचन ने वत्स देश की पूर्वी सीमा पर बसे वारणावत (वर्तमान बरौत) के दक्षिण गंगातट पर एक 'लाक्षागृह' बनवाया पाण्डवों के आवासहेतु। योजना यह थी कि माता कुन्ती के साथ पर्यटन पर निकले पाण्डव इसी भवन में ठहराये जायेंगे तथा उनके गहरी नींद में डूब जाने पर पुरोचन भवन में आग लगा देगा। चूँकि भवन का निर्माण लाख आदि ज्वलनशील द्रव्यों से कराया गया है अत: भस्मसात् होने में विलम्ब नहीं लगेगा।

इधर महामात्य विदुर के गुप्तचरों ने दुर्योधन के दुस्संकल्प तथा पुरोचन की योजना का पता लगा लिया। अत: विदुर ने सांकेतिक कूटभाषा में युधिष्ठिर को सब समझा दिया। पाण्डव उस लाक्षागृह में गये और रातोंरात उन्होंने भवन से गंगातट तक सुरंग बना ली, और एक रात स्वयं लाक्षागृह में आग लगा कर, सुरंग-मार्ग से गंगातट पर पहुँच गये। दुर्भाग्यवश उसी रात भवन में अपने पाँच पुत्रों के साथ ठहरी एक भीलनी जीवित जल मरी। कौरवों ने विश्वास कर लिया कि पाण्डवों का नाश हो गया लाक्षागृह की आग में।

लाक्षा या लाख का संस्कृत में एक और पर्याय है—जतु। अत: लाक्षागृह को ही **'जतुगृह'** भी कहा गया है। इसी जतुगृह में पाँचो पाण्डव माता-सहित जीवित जल मरे थे (कौरवों की दृष्टि में) अत: 'जतुगृह' जीवित जल मरने का प्रतीक बन गया समाज में। यही 'जतुगृह' जौहर है।

संस्कृत के शब्द जब प्राकृत-अपभ्रंश में रूपान्तरित होते हैं तो उनका कोई न कोई नियम होता है। ये नियम वररुचि तथा मार्कण्डेय आदि के व्याकरणों में सूत्र-रूप में दिये गये हैं।

जतुगृह से जौहर की प्रक्रिया देखें—
जतुगृह > जउगृह > जउघर > जउहर > जोहर > जौहर।

कगचजतदपयवां प्रायो लोप: सूत्र से दो स्वरों के बीच आये जतु के **तकार** का लोप होने से उसका स्वरमात्र (उ) बचा। अब 'गृहस्य घरोऽपतौ' सूत्र से (गृह के साथ यदि पति शब्द न हो तो उसे **घर** आदेश हो जाय) गृह का घर हो गया। तीसरे चरण में घर के घकार का **हकार** हो गया—जउहर। अब ज + उ में गुणसन्धि होने से जोहर बन गया। मुख-सुख के लिये जोहर को ही जौहर कहा जाने लगा। इस प्रकार राजस्थान का जौहर (सामूहिक रूप से आग में जीवित जल मरना) महाभारत-काल का जतुगृह (लाख का बना घर) है। अलाउद्दीन द्वारा राणा रत्नसिंह को बन्दी बना लेने पर रानी पद्मिनी ने इसी जौहर-व्रत का पालन किया था। अलाउद्दीन के ही रणथम्भौर-अभियान में, राव हम्मीर सिंह के निर्णायक-युद्ध करने से पूर्व ही, उनकी राजमहिषी और राजपुत्री देवलदेवी आदि ने भी जौहर किया था। इस भयावह, लोमहर्षक, दुर्धर्ष साहसिक अभियान को चरितार्थ करने वाली, राजस्थान की वीर क्षत्राणियों के प्रति, उस घटना के स्मरण-मात्र से हमारा शीश श्रद्धावनत हो उठता है।

पाठकों के पत्र

आपकी पत्रिका सचमुच बहुत अच्छी है, मुझे इसका इन्तजार रहता है, सितम्बर अंक मिला। आपका सम्पादकीय हिन्दी भाषा के उत्थान के लिए मील का पत्थर है, आज जब चारों तरफ अंग्रेजी का बोलबाला है ऐसे में आपका सम्पादकीय मन में हिन्दी भाषी होने का अभिमान जगाता है। इसके अतिरिक्त अन्य जानकारी भी बहुत बेमिसाल रहती है। इतनी अच्छी पत्रिका के लिए साधुवाद।

—विजयकुमार शर्मा, ग्वालियर

पत्रिका पठनीय सामग्री से पूर्ण है और नये साहित्य की जानकारी व कुछ समाचार भी ज्ञात कराती है। **—मदन मोहन वर्मा,** ग्वालियर

'भारतीय वाङ्मय' का सितम्बर 2010 अंक मिला। आभारी हूँ। अंक का सम्पादकीय 'हिन्दी दिवस' की सार्थकता पर प्रश्न चिह्न खड़ा करता है। वास्तव में हमारा देश उत्सवधर्मी देश है, दिवस, सप्ताह या पखवाड़ा मना लेना ही पर्याप्त समझा जाता है, उस दिवस के पीछे की संकल्पना के प्रति समर्पण कहीं नहीं दिखता। हिन्दी और भारतीय भाषाएँ तो हमारे देश या समाज की प्राथमिकता सूची से बाहर हैं। हिन्दी कमोबेश देश की सम्पर्क भाषा तो बन चुकी है परन्तु राजभाषा नहीं बन पाई है और शायद बन भी न पाए।

—वीरेन्द्र परमार, फरीदाबाद

हमेशा की तरह नवांक अनेक महत्त्वपूर्ण सूचनाओं से परिपूर्ण है। आपका सम्पादकीय गहरी मार करता है। अभी सच्चा लोकतन्त्र तो प्रतीक्षा सूची में है जैसे। 'दिवंगत विदेशी हिन्दी सेवी' लेख के माध्यम से अनेक हिन्दी प्रेमियों के बारे में पता चला। हिन्दी अपने घर में ही बेगानी-सी होती जा रही है। ऐसे समय में इस तरह के लिए सोचने पर तो विवश करते ही हैं कि हम अपने आँगन इस तुलसी (हिन्दी) को लगातार सींचते रहें ताकि पर्यावरण शुद्ध रहे।

—गिरीश पंकज, रायपुर

आपके कुशल सम्पादकत्व में प्रकाशित यशस्वी पत्रका 'भारतीय वाङ्मय' का सितम्बर 2010 अंक मिला, धन्यवाद। 'उत्सव निषेध : एक संकल्प' लेख मन को छू गया। इस यथार्थ से पीड़ा भी हुई और हिन्दी के साथ ऐसा भद्दा मजाक करने वालों के प्रति आक्रोश भी। काश! हमारी आत्मा जगती और हम अपनी भाषा, संस्कृति और राष्ट्र के प्रति वफादार हो पाते। आप हिन्दी की सर्वोत्तम सेवा कर रहे हैं। हार्दिक बधाई एवं साधुवाद। इस छोटी सी पत्रिका के माध्यम से हिन्दी साहित्य के सभी पहलुओं का दिग्दर्शन कराते हैं। मेरी शुभेच्छा है कि यह पत्रिका हिन्दी की सर्वश्रेष्ठ पत्रिका बनने का गौरव एवं यश प्राप्त करे और हिन्दी की गौरव-गरिमा को देशवासियों में फैलाकर राष्ट्र जीवन में देश भक्ति का संचार करे। सम्पादक मण्डल को कोटिश: बधाई।

—शिवकरण दूबे 'वेदराही', शक्तिनगर

'भारतीय वाङ्मय' की सेवा अनन्य है। उसके विकास में राष्ट्रभाषा का विकास भी हो रहा है, साथ ही बड़ा सुन्दर प्रकाशन करता आया है। हिन्दी की अच्छी सेवा की उसने। उसके साथ साहित्य सस्ते मूल्य पर जन साधारण को उपलब्ध कराता आ रहा है। भारतीय वाङ्मय की निरन्तर उन्नति और सफलता के लिए मेरी हार्दिक शुभकामनाएँ।

—कुमारी रश्मि मालागी
धारवाड़, कर्नाटक

पत्रिका का सितम्बर 2010 का अंक प्राप्त हुआ। प्रतीक्षानुरूप हिन्दी-दिवस की सम्पादकीय पढ़ने का सुअवसर मिला। इसमें प्रस्तुत विचार निश्चित रूप से कुछ सार्थक करने के लिए उत्प्रेरित करते हैं। हिन्दी के वास्तविक सेवी तो अहर्निश अपनी अर्चना में लगे हुए हैं, पर यह पखवाड़े का प्रेम एक कृत्रिम ताना-बाना से अधिक कुछ नहीं लगता, बल्कि इस पर अधिक व्यय भी होता है, ये विचार मन में गहराई तक झकझोर गए।

राजभाषा के रूप में हिन्दी को प्रतिष्ठापित करने के लिए यह पर्व पूर्ण सक्षम नहीं लगता, निश्चित रूप से इस लक्ष्य को प्राप्त करने में हमें कुछ और करना होगा।

—शुभदा पाण्डेय, असम

राष्ट्र-गौरव

डॉ० मुकेशप्रताप सिंह, डॉ० साधना द्विवेदी

''राष्ट्रीय गौरव के सही अर्थ की खोज आज की मौलिक समस्या है। राष्ट्रीय एकता, अखण्डता, अस्तित्व एवं अस्मिता की अनेक समस्याएँ इससे लिपटी और मिली हैं। राष्ट्रीय वैभव एवं विभूतियाँ ही वे सत्य हैं, जिन पर हम प्रत्यक्ष रूप से गौरवान्वित हो सकते हैं और प्रकारान्तर से इन्हें ही राष्ट्रीय गौरव कहा जा सकता है।

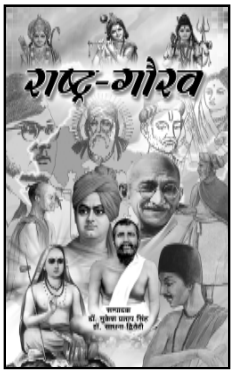

आकार डिमाई | *पृष्ठ* 292

सजिल्द : 978-81-7124-627-4 • रु० 200.00
अजिल्द : 978-81-7124-630-4 • रु० 90.00

(पुस्तक के एक अध्याय का अंश)

प्राचीन भारत में विश्वविद्यालय

प्राचीन काल में गुरुओं के आश्रम ही शिक्षा के प्रसिद्ध केन्द्र थे जहाँ स्थायी छात्र स्थायी रूप से निवास करते हुए बहुत से विषयों का अध्ययन करते थे। गुरु ही उनके भोजन, आवास तथा वस्त्र का समुचित प्रबन्ध करते थे। इनमें देश के कोने-कोने से विद्यार्थी अध्ययन के लिए आया करते थे। तत्कालीन राजाओं ने इन शिक्षा- केन्द्रों को आर्थिक सहायता प्रदान कर उनके विकास में उल्लेखनीय योगदान दिया जिसके परिणामस्वरूप राजधानियों और तीर्थ-नगरियों में इन शिक्षण-केन्द्रों की संख्या बहुत बढ़ गयी। इसी कारण तक्षशिला, काशी, पाटलिपुत्र, कन्नौज, मिथिला और धारा को उत्तर भारत का तथा कांची, मालखेड़ा, तंजौर, कल्याणी को दक्षिण भारत का प्रसिद्ध शिक्षा-केन्द्र बना दिया गया। धीरे-धीरे बौद्ध-विहार एवं मठ भी गुरुकुलों के आधार पर विकसित होने लगे। इन शिक्षण-संस्थानों के अनुशासन और नियम हिन्दू शिक्षण-व्यवस्था के अनुसार ही थे। राजगृह, वैशाली, श्रावस्ती तथा कपिलवस्तु आदि नगरों में कई प्रसिद्ध विहारों और मठों का उत्कर्ष हुआ, जो आगे चलकर बौद्ध शिक्षा के प्रधान केन्द्र बन गये। नालन्दा, विक्रमशिला और वल्लभी जैसे विश्वविद्यालयों का उद्भव इसी आधार पर हुआ था। इन विश्वविद्यालयों में बौद्ध धर्म के अतिरिक्त अन्य विषयों का अध्ययन-अध्यापन भी कराया जाता था।

तक्षशिला

प्राचीन भारत का सबसे महत्त्वपूर्ण शिक्षाकेन्द्र तक्षशिला (वर्तमान पाकिस्तान) प्रारम्भ से ही ज्ञान और विद्या के क्षेत्र में बहुत अधिक प्रसिद्ध था। कहा जाता है कि इसकी स्थापना राम के छोटे भाई भरत ने की थी और अपने पुत्र तक्ष को यहाँ का शासक नियुक्त किया था। इसी तक्ष के नाम पर इसका नाम तक्षशिला पड़ा। महाभारत के अनुसार जनमेजय का नागयज्ञ भी इसी स्थान पर हुआ था। यद्यपि प्राचीन ग्रन्थों में इसका शिक्षण-केन्द्र के रूप में उल्लेख नहीं मिलता, परन्तु 7वीं शती ई०पू० तक यह स्थान विशिष्ट शिक्षा-केन्द्र के रूप में ख्याति प्राप्त कर चुका था। इस सम्बन्ध में विस्तृत जानकारी हमें जातक-ग्रन्थों के माध्यम से प्राप्त होती है। जातकों के अनुसार यद्यपि तक्षशिला एक उच्चकोटि का शिक्षा-केन्द्र था, किन्तु उसका स्वरूप किसी विश्वविद्यालय अथवा महाविद्यालय की भाँति नहीं था, क्योंकि न तो कोई निश्चित शिक्षा-काल था, न उपाधियाँ और न कोई पाठ्यक्रम। अपितु यहाँ तो विभिन्न विधाओं और कलाओं के उच्च कोटि के विद्वान् रहते थे जो स्वतन्त्र रूप से शिक्षा प्रदान करते थे और जिनकी विद्वत्ता और ख्याति से आकृष्ट होकर काशी, कुरु, राजगृह, मिथिला, कोशल तथा उज्जयिनी जैसे सुदूरवर्ती नगरों के विद्यार्थी विद्यार्जन करने के लिए आते थे।[1] प्राचीन भारत के अनेक बड़े-बड़े व्यक्तियों ने तक्षशिला में शिक्षा प्राप्त की थी। राजनीति और कूटनीति के महापण्डित चाणक्य ने तक्षशिला में ही अध्ययन किया था और बाद में यहीं के आचार्य बने थे। चन्द्रगुप्त मौर्य इन्हीं का शिष्य था। व्याकरण के प्रसिद्ध विद्वान् पाणिनि ने तक्षशिला में रहकर ही शिक्षा प्राप्त की थी। मगध-सम्राट् बिम्बिसार के राजवैद्य जीवक ने तक्षशिला में रहकर 7 वर्षों तक शल्यशास्त्र और चिकित्साशास्त्र की शिक्षा ग्रहण की थी। वह पटना से पढ़ने के लिए इतनी दूर गया था।[2] सिकन्दर के आक्रमण के समय यह स्थान अपने दार्शनिकों के लिए बहुत प्रसिद्ध था।

तक्षशिला में विद्यार्थी उच्च शिक्षा के अध्ययन के लिए आते थे। यहाँ विभिन्न विषयों की शिक्षा प्रदान की जाती थी। इनमें वेदत्रयी, वेदांग, व्याकरण, तर्कशास्त्र, दर्शन एवं 18 शिल्प प्रमुख थे।[3] अल्तेकर के अनुसार इन 18 शिल्पों में आयुर्वेद, शल्य चिकित्सा, धनुर्विद्या, सम्बद्ध युद्ध-कला, हस्ति विद्या, ज्योतिष, भविष्य-कथन, मुनीमी, अर्थशास्त्र, व्यापार, कृषि, रथचालन, इन्द्रजाल, नागवशीकरण, गुप्त विधि-अनवेषण, संगीत, नृत्य और चित्रकला की गणना होती थी।[4] यह नगर उत्तर-पश्चिमी सीमा पर स्थित था। अत: वर्तमान अवशेष से इस बात के प्रमाण मिलते हैं कि तक्षशिला ने 6वीं सदी ई०पू० में 5वीं सदी ई० तक अनेक उथल-पुथल देखे थे। इन आक्रमणों का यह परिणाम हुआ कि ईरानियों के प्रभाव के कारण पश्चिमोत्तर भारत में ब्राह्मी के स्थान पर खरोष्ठी लिपि का प्रचार हुआ। इसके साथ-साथ यूनानी तक्षण-कला, मुद्रा-निर्माण-कला और लिपि तथा दर्शन का भारत में प्रसार हुआ जिससे भारतीयों को नया आयाम प्राप्त हुआ।

शिक्षा का यह केन्द्र लगभग 1000 वर्षों तक देश-विदेश में प्रसिद्ध रहा। शिक्षा-केन्द्र के रूप में तक्षशिला का महत्त्व चौथी सदी ई० तक ही रहा क्योंकि 5वीं सदी के प्रथम चरण में भारत की यात्रा पर आने वाले चीनी-यात्री फाह्यान ने ऐसा कोई विवरण नहीं दिया। 6वीं सदी में हूण आक्रमणकारियों ने इस शिक्षा-केन्द्र का सम्पूर्ण विनाश कर दिया। 7वीं सदी में भारत आने वाले चीनी-यात्री युवान च्वांग के समय इस नगर का सम्पूर्ण वैभव और महत्त्व समाप्त हो चुका था।[5]

काशी

तक्षशिला के पश्चात् काशी ही प्राचीन भारत की महत्त्वपूर्ण शिक्षा-केन्द्र थी, जहाँ दूर-दूर से विद्यार्थी शिक्षा ग्रहण करने के लिए आते थे। वैदिक काल में शिक्षा- केन्द्र के रूप में काशी का उल्लेख नहीं मिलता किन्तु उपनिषद्-काल तक आते-आते काशी शिक्षा-केन्द्र के रूप में विख्यात हो चुका था। काशी का शासक अजातशत्रु अपनी ज्ञान-गरिमा, प्रतिभा और विद्वत्ता के लिए प्रसिद्ध था। 23वें जैन तीर्थंकर पार्श्वनाथ के पिता अश्वसेन के काशी का शासक होने के कारण यह नगरी जैन धर्म और दर्शन का भी प्रधान केन्द्र थी। काशी की महत्ता के कारण ही महात्मा बुद्ध ने अपना धर्म-प्रचार सर्वप्रथम यहीं से प्रारम्भ करने का निश्चय किया था ताकि उसका प्रभाव काशी के विद्वानों पर पड़ सके।

देवीभागवतपुराण के अनुसार काशी का आरम्भिक नाम आनन्दवन था। किन्तु वाराह अवतार के सन्दर्भ में भागवतपुराण में प्रतीकात्मक कथा मिलती है। उसके अनुसार जब हिरण्याक्ष पृथ्वी को समुद्र में डुबो रहा था तब काशी भगवान् शंकर के त्रिशूल की नोक पर लग कर पृथ्वी से अलग हो गयी थी। उसी समय पृथ्वी से मुक्त होने के कारण इसका नाम अविमुक्तक्षेत्र पड़ा। कालान्तर में इसका नाम फिर काशी पड़ा।

जातकों से ज्ञात होता है कि काशी के अनेक विद्वान् तक्षशिला के स्नातक थे।...

प्राप्ति स्थान

विश्वविद्यालय प्रकाशन, चौक, वाराणसी

www.vvpbooks.com

सम्मान-पुरस्कार

'शब्द साधक शिखर' से सम्मानित नामवर

''मैं इसी जमीन का हूँ और इसी जमीन से जुड़ा रहना चाहता हूँ। यदि उदय प्रताप कॉलेज न होता तो मैं प्राइमरी का अध्यापक होता। यदि काशी हिन्दू विश्वविद्यालय नहीं होता तो मैं एम०ए० नहीं कर पाता। मेरे लिए काशी हिन्दू विश्वविद्यालय सब कुछ है क्योंकि यहीं से मैंने जीवन यात्रा शुरू की थी।'' भावनाओं से भरे यह उद्‌गार हिन्दी के प्रख्यात समीक्षक प्रो० नामवर सिंह के मुख से उस समय निकले जब काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के कलासंकाय प्रेक्षागृह में कुलपति प्रो० धीरेन्द्र पाल सिंह ने उन्हें 'शब्द साधक शिखर सम्मान' से सम्मानित किया। सम्मानित होने वाली अन्य विभूतियों में उपन्यासकार राजेन्द्र को 'शब्द साधना जनप्रिय सम्मान' एवं निशांत को 'शब्द साधक युवा सम्मान' से अलंकृत किया गया। इस अवसर पर प्रो० नामवर सिंह पर केन्द्रित पाखी पत्रिका के विशेष अंक का लोकार्पण भी किया गया। अध्यक्षता करते हुए कुलपति प्रो० सिंह ने कहा कि युवा पीढ़ी के लिए नामवर को देखना, सुनना एवं भविष्य के गुनने का ऐतिहासिक क्षण है। इस मौके पर 'परम्परा और सृजनात्मकता' विषयक संगोष्ठी का भी आयोजन किया गया। प्रो० कमलेश दत्त त्रिपाठी, प्रो० रेवा प्रसाद द्विवेदी, पाखी पत्रिका के प्रधान सम्पादक अपूर्व जोशी आदि ने अपने विचारों को रखा।

डॉ० सुरजीत पातर को 'सरस्वती सम्मान'

7 सितम्बर को नई दिल्ली में के०के० बिरला फाउंडेशन द्वारा आयोजित समारोह में केन्द्रीय मानव संसाधन विकास मन्त्री श्री कपिल सिब्बल ने डॉ० सुरजीत पातर को उनकी पंजाबी काव्यकृति 'लफ्जां दी दरगाह' के लिए वर्ष 2009 के 'सरस्वती सम्मान' से सम्मानित किया। सम्मान-स्वरूप उन्हें प्रशस्ति व प्रतीक चिह्न के साथ साढ़े सात लाख रुपए की राशि दी गई।

श्रीमती चित्रा मुद्‌गल को 'चिन्नप्प भारती सम्मान'

हिन्दी की सुप्रसिद्ध लेखिका श्रीमती चित्रा मुद्‌गल को उनके उपन्यास 'आवां' के लिए 'चिन्नप्प भारती पुरस्कार' देने की घोषणा की गई है। चिन्नप्प भारती न्यास तमिलनाडु हर वर्ष तमिल और किसी एक भारतीय भाषा के साहित्यकार को उसकी पिछले दस सालों में प्रकाशित उत्कृष्ट रचना के लिए पुरस्कार प्रदान करता है। चिन्नप्प भारती न्यास निर्णायक मण्डल की ओर से पुरस्कार राशि के रूप में 50 हजार रुपए श्रीमती चित्रा मुदग्ल को और तमिल भाषा के लिए दो साहित्यकारों पूर्व प्रोफेसर श्री के०पी० अरवाणन और श्री कौरनूर जाकिर रजा को साझा पुरस्कार दिया जाएगा तथा तमिल के छह अन्य साहित्यकारों को भी प्रोत्साहन पुरस्कार-स्वरूप पाँच-पाँच हजार रुपए दिए जाएँगे।

डॉ० लक्ष्मीशंकर वाजपेयी सम्मानित

31 अगस्त को लंदन के नेहरू केन्द्र में प्रख्यात कवि डॉ० लक्ष्मीशंकर वाजपेयी को 'अन्तर्राष्ट्रीय वातायन कविता सम्मान 2010' से सम्मानित किया गया। डॉ० सत्येन्द्र श्रीवास्तव की अध्यक्षता में हुए इस कार्यक्रम में ब्रिटेन की बैरोनेस श्रीला फ्लैदर और भारत के वरिष्ठ राजनेता श्री केशरीनाथ त्रिपाठी ने डॉ० वाजपेयी को सम्मानित किया।

श्री संतोषानंद को 'मनहर ठहाका पुरस्कार'

23 अगस्त को मुंबई महानगर की प्रमुख सांस्कृतिक एवं सामाजिक संस्था 'साहित्य संगम' द्वारा वर्ष 2010 का 'मनहर ठहाका पुरस्कार' प्रख्यात कवि एवं फिल्मी गीतकार श्री संतोषानंद को दिया गया।

डॉ० रमेश पोखरियाल की पुस्तक को पुरस्कार

केन्द्रीय पर्यटन मन्त्रालय ने उत्तराखण्ड के मुख्यमन्त्री डॉ० रमेश पोखरियाल 'निशंक' द्वारा लिखित पुस्तक 'हिमालय का महाकुंभ नंदा राजजात' को प्रथम पुरस्कार के लिए चुना है। यह पुरस्कार पर्यटन से सम्बन्धित विषयों पर मूल रूप से हिन्दी में लिखित पुस्तकों को 'राहुल सांकृत्यायन पर्यटन पुरस्कार योजना' के अन्तर्गत दिया जाता है। उन्हें 20 हजार रुपए का नकद पुरस्कार और प्रमाण-पत्र दिया जाएगा।

शायर शहरयार एवं श्री कुरुप को ज्ञानपीठ पुरस्कार

उर्दू के नामचीन शायर अखलाक मुहम्मद खान 'शहरयार' को 44वाँ ज्ञानपीठ पुरस्कार देने की 24 सितम्बर को घोषणा की गई। उन्हें यह पुरस्कार वर्ष 2008 के लिए दिया जाएगा। साथ ही मलयालम के प्रसिद्ध कवि व साहित्यकार ओ०एन०वी० कुरुप को वर्ष 2007 के लिए 43वाँ ज्ञानपीठ पुरस्कार दिया जाएगा।

जाने-माने लेखक और ज्ञानपीठ पुरस्कार विजेता डॉ० सीताकांत महापात्र की अध्यक्षता में ज्ञानपीठ चयन समिति की बैठक में दोनों साहित्यकारों को पुरस्कृत करने का निर्णय लिया गया। उर्दू के जाने-माने शायर कुँवर अखलाक मुहम्मद खान 'शहरयार' का जन्म 1936 में आंवला (बरेली, उत्तरप्रदेश) में हुआ। 1966 में उन्होंने अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय में उर्दू के लेक्चरर के तौर पर काम शुरू किया। वह यहीं से उर्दू के अध्यक्ष के तौर पर सेवानिवृत्त भी हुए। बालीवुड की कई लोकप्रिय हिन्दी फिल्मों के लिए गीत लिखने वाले शहरयार को सबसे ज्यादा लोकप्रियता 1981 में आई 'उमराव जान' से मिली। शहरयार को उत्तर प्रदेश उर्दू अकादमी पुरस्कार, साहित्य अकादमी पुरस्कार, दिल्ली उर्दू पुरस्कार और फिराक सम्मान सहित कई पुरस्कारों से सम्मानित किया जा चुका है।

वर्ष 2007 के लिए ज्ञानपीठ पुरस्कार पाने वाले कुरुप का जन्म 1931 में कोल्लम जिले में हुआ। वह समकालीन मलयालम कविता की आवाज बने। उन्होंने प्रगतिशील लेखक के तौर पर अपने साहित्य सफर की शुरुआत की और वक्त के साथ मानवतावादी विचारधारा को सुदृढ़ किया। साथ ही सामाजिक सोच और सरोकारों का दामन भी थामे रखा। वाल्मीकि, कालिदास और टैगोर से प्रभावित कुरुप की 'उज्जयिनी' और 'स्वयंवरम्' जैसी कविताओं ने मलयालम कविता को समृद्ध किया। उनकी कविता में संगीतमयता के साथ मनोवैज्ञानिक गहराई भी है। कुरुप के अब तक 20 कविता संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं और उन्होंने गद्य लेखन भी किया है। उनको केरल साहित्य अकादमी पुरस्कार, साहित्य अकादमी पुरस्कार, वयलार पुरस्कार और पद्मश्री से सम्मानित किया जा चुका है।

कमला गोइनका फाउंडेशन का पुरस्कार समारोह

28 अगस्त को मुंबई में कमला गोइनका फाउंडेशन द्वारा इस वर्ष का 'स्नेहलता गोइनका व्यंग्यभूषण पुरस्कार' सुप्रसिद्ध व्यंग्यकार श्री माणिक वर्मा को, 'रामनाथ गोइनका पत्रकार शिरोमणि पुरस्कार' वरिष्ठ पत्रकार श्री विश्वनाथ सचदेव को और महिला रचनाकारों के साहित्य में महत्त्वपूर्ण योगदान के लिए 'रत्नदेवी गोइनका वाग्देवी पुरस्कार' सुप्रसिद्ध साहित्यकार श्रीमती चन्द्रकान्ता को डॉ० रामजी तिवारी की अध्यक्षता में आयोजित एक भव्य समारोह में प्रदान किए गए। नगद राशि के साथ शॉल, श्रीफल, स्मृति-चिह्न व पुष्पगुच्छ प्रदान कर पुरस्कृत रचनाकारों को सम्मानित किया गया। इसी आयोजन में 'गोइनका व्यंग्य-साहित्य सारस्वत सम्मान' से वरिष्ठ व्यंग्यकार श्री बटुक चतुर्वेदी सम्मानित किए गए। पत्रकार श्री विनोद तिवारी समारोह के मुख्य अतिथि थे।

पटनायक ने अमेरिका में जीते तीन पुरस्कार

न्यूयॉर्क में रेत से कलाकृतियाँ बनाने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त भारतीय कलाकार सुदर्शन पटनायक ने यहाँ हुई एक प्रतियोगिता में तीन पुरस्कार जीते हैं। इस प्रतियोगिता का आयोजन यहाँ वर्जीनिया समुद्र तट पर किया गया

था। पटनायक को नेप्चून च्वॉइस पुरस्कार से सम्मानित किया गया और कुल मिलाकर प्रतियोगिता में पाँचवें स्थान पर रहे। रेत पर मूर्तियाँ बनाने की यह प्रतियोगिता 22 सितम्बर से 24 सितम्बर तक चली। इसमें पटनायक सहित दुनिया के ग्यारह कलाकारों ने भाग लिया।

शरीफ को शिक्षा रत्न अवार्ड

अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी के संस्कृत विद्वान् डॉ० मोहम्मद शरीफ को शिक्षा रत्न से सम्मानित किया गया है। इंडियन इंटरनेशनल फ्रेंडशिप सोसाइटी की ओर से दिल्ली में आयोजित समारोह में पांडिचेरी के गवर्नर डॉ० इकबाल सिंह और पूर्व मुख्य चुनाव आयुक्त जीवीजी कृष्णामूर्ति द्वारा डॉ० शरीफ को इस सम्मान से सम्मानित किया गया। डॉ० शरीफ सम्भवत: देश के पहले मुस्लिम संस्कृत विद्वान हैं, जिन्हें डी०लिट्० की उपाधि से सम्मानित किया गया है।

रवीन्द्र केलकर को ज्ञानपीठ पुरस्कार

विगत दिनों पणजी में गोवा के मुख्यमन्त्री दिगम्बर कामत, साहित्यकार नामवर सिंह और पुरस्कार निर्णायक मण्डल के अध्यक्ष सीताकांत महापात्र की उपस्थिति में आयोजित समारोह में 42वें भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार से कोंकणी के प्रख्यात साहित्यकार रवीन्द्र केलकर को साहित्य जगत् में योगदान के लिए लोकसभा अध्यक्ष मीरा कुमार ने वर्ष 2006 का ज्ञानपीठ पुरस्कार प्रदान किया। केलकर ने कोंकणी, हिन्दी और मराठी में 32 पुस्तकें लिखी हैं। 85 वर्षीय केलकर पिछले कुछ समय से बीमार चल रहे थे और विधि का विधान देखिये कि पुरस्कार मिलने के कुछ दिनों पश्चात् विगत दिनों उनका निधन हो गया।

डॉ० मदनलाल मधु सम्मानित

मास्को स्थित उच्चायोग में आयोजित समारोह में डॉ० मदनलाल मधु के 85वें जन्मदिन पर उनके सम्मान में समारोह आयोजित किया गया। डॉ० मधु सन् 1957 में एक सरकारी कार्यक्रम के अन्तर्गत रूस में एक अनुवादक के रूप में आए तब से वे वहीं हैं। उन्होंने रूसी भाषा से अलेक्जेंडर पुश्किन, चेखव और टालस्टाय की कृतियाँ सहित अनेक उल्लेखनीय कृतियों का हिन्दी में अनुवाद किया। उन्हें रूसी सरकार से ऑर्डर ऑफ फ्रेंडशिप और भारत सरकार से पद्मश्री अलंकरण प्राप्त हैं।

मीरा-स्मृति सम्मान समारोह

'मीरा फाण्डेशन' एवं 'साहित्य भण्डार' के संयुक्त तत्त्वावधान में 12 सितम्बर, 2010 को उत्तर मध्य क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र, इलाहाबाद में 'मीरा-स्मृति सम्मान समारोह' के अन्तर्गत 'मीरा स्मृति व्याख्यान माला' का आयोजन किया गया। साहित्यकार केदारनाथ अग्रवाल की जन्मशती के उपलक्ष्य में व्याख्यान का विषय था—'केदारनाथ अग्रवाल : दृष्टि और सन्दर्भ'। प्रो० कमला प्रसाद की अध्यक्षता में आयोजित इस संगोष्ठी में मुख्य वक्ता थे इलाहाबाद विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के पूर्व अध्यक्ष प्रो० राजेन्द्र कुमार।

द्वितीय सत्र में देश के पाँच साहित्यकारों, समीक्षकों एवं मीडियाकर्मियों को सम्मानित किया गया। इलाहाबाद निवासी व प्रसिद्ध साहित्यकार-समीक्षक प्रो० दूधनाथ सिंह, वाराणसी के संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान् व कालिदास एकेडमी उज्जयिनी के पूर्व-निदेशक, इमेरिटस प्रोफेसर कमलेशदत्त त्रिपाठी, सोलापुर महाराष्ट्र के हिन्दी मराठी भाषाओं के साधक लेखक श्री निशिकान्त ठकार, दिल्ली की निवासी कथा जगत की चर्चित नायिका सुश्री चित्रा मुद्गल, छत्तीसगढ़, रायपुर के विख्यात पत्रकार व 'देशबन्धु' समाचार-पत्र के पूर्व-प्रधान सम्पादक श्री ललित सुरजन को अंगवस्त्रम्, प्रशस्तिपत्र एवं स्मृति चिह्न प्रदान किया गया। सम्मान समारोह की अध्यक्षता श्री आनन्दवर्द्धन शुक्ल, निदेशक, कला संगम, उत्तर मध्य क्षेत्र सांस्कृतिक केन्द्र, इलाहाबाद ने की।

इस अवसर पर प्रसिद्द चित्रकार डॉ० राधेश्याम अग्रवाल की पुस्तक 'गणेशांकन' का लोर्कापण किया गया, जिसमें डॉ० अग्रवाल ने गणेश के एक सौ आठ चित्रों की रचना की है।

39 कलाकारों को अकादमी पुरस्कार

राष्ट्रपति प्रतिभा पाटिल ने 28 सितम्बर को वर्ष 2009 के लिए प्रदर्शनकारी कलाओं के क्षेत्र में 39 कलाकारों को संगीत नाटक अकादमी पुरस्कारों से सम्मानित किया। इनमें छह सर्वश्रेष्ठ कलाकारों को संगीत नाटक अकादमी फेलोशिप (अकादमी रत्न) और संगीत, नृत्य और रंगमंच के क्षेत्र में 33 कलाकारों को संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार प्रदान किए।

राष्ट्रपति ने दिल्ली में आयोजित एक समारोह में जिन सर्वश्रेष्ठ छह कलाकारों को अकादमी रत्न से सम्मानित किया, उनमें लालगुडी जयरमन, श्री राम लागू, यामिनी कृष्णमूर्ति, कमलेश दत्त तिरुपति, पण्डित जसराज और किशोरी अमोनकर शामिल हैं। अब तक केवल 32 कलाकारों को अकादमी रत्न से सम्मानित किया गया है। राष्ट्रपति ने संगीत, नृत्य और रंगमंच के क्षेत्र में 33 सर्वश्रेष्ठ कलाकारों को संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया। इसमें संगीत के क्षेत्र में 8, नृत्य के क्षेत्र में 8 और रंगमंच के क्षेत्र में 8 कलाकारों का चयन किया गया है। इनके अलावा, अन्य प्रदर्शनकारी कलाओं के क्षेत्र में 8 प्रसिद्ध कलाकारों का चयन किया गया है। लीला वेंकटरामन का चयन प्रदर्शन कलाओं के क्षेत्र में समग्र योगदान के लिए किया गया है। अकादमी फेलोशिप के लिए हर कलाकार को ताम्र पत्र और अंगवस्त्रम के अलावा तीन लाख रुपये की राशि और अकादमी पुरस्कार के लिए एक लाख रुपए की राशि प्रदान की गई।

हिन्दी प्रचारक शताब्दी सम्मान-2010

देश की प्रसिद्ध साहित्यिक और शैक्षणिक संस्था 'साहित्य-मण्डल' श्रीनाथद्वारा (राजस्थान) के तत्त्वावधान में 13-14 सितम्बर 2010 को 'हिन्दी लाओ : देश बचाओ' दो दिवसीय समारोह देश के विभिन्न भागों से आये शताधिक हिन्दी विद्वानों की गरिमामयी उपस्थिति में सम्पन्न हुआ।

13 सितम्बर को अपराह्न देश के विभिन्न भागों से आये हुए हिन्दी विद्वानों को 'हिन्दी भाषा भूषण' उपाधि से समलंकृत करते हुए सम्मानित किया गया।

दूसरे दिन 14 सितम्बर को अन्तिम सत्र में ओस्लो (नार्वे) से पधारे कवि, साहित्यकार एवं सम्पादक सुरेशचन्द्रजी शुक्ल 'शरद आलोक' को विदेशों में की जा रही राष्ट्रभाषा के प्रचार-प्रसार एवं अहर्निश योगदान हेतु 'हिन्दी प्रचारक शताब्दी सम्मान-2010' प्रदान किया गया। इसके अतिरिक्त श्री हुल्लड़जी मुरादाबादी, मुंबई को 'श्री शिवकुमारजी शास्त्री शताब्दी सम्मान' तथा श्री संदीप राशिनकरजी (इंदौर) को 'सरस्वती सम्मान-2010' से सम्मानित करते हुए सभी महानुभावों को 11-11 हजार की राशि भेंट की गयी तथा उनका भव्य अभिनन्दन करते हुए अभिनंदनपत्रार्पण किया गया।

राष्ट्रधर्म गौरव सम्मान राजेन्द्र शंकर भट्ट को

2010 का 'राष्ट्रधर्म गौरव सम्मान' प्रतिष्ठित पत्रकार और लेखक राजेन्द्र शंकर भट्ट को उनकी लिखित जीवनी 'महाराणा कुंभा' के लिए दिया जायगा। सम्मान समारोह लखनऊ में आगामी 31 अक्टूबर को होगा, जिसमें सम्मानपत्र, अंगवस्त्र, स्मृतिचिह्न तथा दस हजार रुपये नकद भेंट किये जायेंगे।

इसके पूर्व नाथद्वारा साहित्य मण्डल द्वारा ग्यारह हजार रुपये की राशि के साथ 'श्री मनोहर कोठारी स्मृति सम्मान' एवं महाराणा प्रताप जयन्ती की पूर्व संध्या पर ग्यारह हजार रुपये की राशि से युक्त 'महाराणा प्रताप सम्मान-2010' इन्हें प्राप्त हो चुके हैं।

रामचन्द्र को वाकोवाक्यम् सम्मान

वाराणसी के सुप्रसिद्ध साहित्यकार व भाषाविद् डॉ० कपिलदेव पाण्डेय की पुण्यतिथि पर विगत दिनों कमच्छा स्थित वाकोवाक्यम् शोध संस्थान में सम्मान समारोह का आयोजन हुआ। इस अवसर पर प्रख्यात ज्योतिर्विद व काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के पूर्व ज्योतिष विभागाध्यक्ष प्रो०

रामचन्द्र पाण्डेय को वाकोवाक्यम् सम्मान दिया गया। अध्यक्षता संस्कृत के विद्वान् प्रो० रेवा प्रसाद द्विवेदी ने की। इस अवसर पर अन्तर्राष्ट्रीय संस्कृत शोध पत्रिका 'वाकोवाक्यम्' के पंचम अंक का लोकार्पण भी किया गया।

समारोह में डॉ० जितेन्द्र नाथ मिश्र, डॉ० कमला पाण्डेय आदि ने विचार व्यक्त किए।

पहला राही मासूम रज़ा साहित्य सम्मान कथाकार नमिता सिंह को

प्रेस क्लब, लखनऊ में आयोजित समारोह में 'वर्तमान साहित्य' पत्रिका की सम्पादक और कथाकार डॉ० नमिता सिंह को 'डॉ० राही मासूम रज़ा साहित्य सम्मान' से सम्मानित किया गया। सामाजिक सरोकारों के प्रति संवेदनशील, प्रसिद्ध साहित्यकार डॉ० राही मासूम रज़ा की जयन्ती पर 1 सितम्बर, 2010 बुधवार को उनके मूल्यों और चिन्ताओं को सही परिप्रेक्ष्य में पहचानने और भविष्य की चुनौतियों का सामना करने का आह्वान किया गया।

'डॉ० राही मासूम रज़ा साहित्य अकादमी' की ओर से आयोजित इस कार्यक्रम में अध्यक्षता करते हुए सुप्रसिद्ध साहित्यकार मुद्राराक्षस ने कहा कि हिन्दी हिन्दुत्व की भाषा बना दी गई है। राही ने दलित पक्ष को बारीकी से उठाया और समाज के ज्वलंत मुद्दों की आलोचनात्मक विवेचना प्रस्तुत की।

लखनऊ विश्वविद्यालय के प्रो० रमेश दीक्षित ने कहा कि राही साम्प्रदायिकता को कोढ़ मानते थे। उनके लिए हिन्दू, मुस्लिम, सिख सम्प्रदाय में कोई भेद नहीं था। उन्होंने राष्ट्रीयता के आधार पर भाषा और संस्कृति को माना है, धर्म को नहीं।

समारोह में सम्मानित नमिता सिंह ने कहा कि यह सम्मान प्रायोजित सम्मानों की परम्परा से अलग है। बड़े उद्देश्यों के लिए यह संस्था बनी है इसलिए मैंने यह सम्मान स्वीकार किया है जो मेरे जीवन का पहला ऐसा सम्मान है। उन्होंने कहा कि राही की तरह सभी कालजयी रचनाकारों को समय की धारा के खिलाफ लड़ना होता है। यह सम्मान साम्प्रदायिकता, जातिवाद और संकीर्णता के विरुद्ध मेरे रचनाकर्म और सामाजिक कार्यों की स्वीकार्यता है।

हिन्दी मनस्वी सम्मान

पिछले दिनों हिन्दी साहित्य सभा, आगरा द्वारा डॉ० शुभदा पाण्डेय को हिन्दी भाषा एवं साहित्य को समृद्ध करने, राष्ट्रभाषा का उत्थान, रचनात्मक सृजन, संस्कृति, अनुवाद, पत्रकारिता, मनोविज्ञान, शिक्षा, समाज सेवा, काव्य एवं गीत लेखन आदि के प्रति समर्पित सेवाओं तथा सराहनीय एवं उल्लेखनीय योगदान के लिये हिन्दी मनस्वी सम्मान से अलंकृत किया गया।

स्मृति-शेष

डॉ० नागेंद्र का निधन

23 अगस्त को हिन्दी के परम्परागत-काव्य के प्रसिद्ध मर्मज्ञ, सुप्रसिद्ध कवि व आलोचक डॉ० छोटे लाल शर्मा 'नागेंद्र' का निधन हो गया। उनकी प्रमुख कृतियों में 'स्वर गंगा', 'अंशुमाली', 'जय नेमीनाथ', 'ऋषभायण', 'गंगा पथ', 'संभावामि युगे-युगे' और 'राष्ट्र अर्चन' प्रमुख हैं। अनेक विश्वविद्यालयों में उनके साहित्य पर शोध-कार्य हो चुका है।

श्री रवींद्र केलकर नहीं रहे

27 अगस्त को ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित जाने-माने कोंकणी साहित्यकार श्री रवींद्र केलकर का गोवा में निधन हो गया। वह 85 वर्ष के थे। उनका जन्म गोवा में 25 मार्च, 1925 को हुआ था। कोंकणी के अलावा हिन्दी और मराठी भाषा में उनकी 32 से अधिक पुस्तकें प्रकाशित हैं। केलकर को ज्ञानपीठ पुरस्कार के अलावा साहित्य अकादेमी पुरस्कार, पद्मभूषण तथा साहित्य अकादेमी की फेलोशिप से भी सम्मानित किया जा चुका है। आधुनिक कोंकणी आन्दोलन के प्रणेता कहे जाने वाले साहित्यकार केलकर स्वतन्त्रता आन्दोलन और गोवा के मुक्ति संग्राम से भी जुड़े रहे।

चला गया शब्दों का जादूगर

हिन्दी के जाने-माने लेखक और पत्रकार 77 वर्षीय कन्हैयालाल नंदन का निधन हो गया है।

नंदन का जन्म उत्तर प्रदेश के फतेहपुर जिले के परस्तेपुर गाँव में 1 जुलाई 1933 को हुआ था। पत्रकारिता में आने से पहले उन्होंने करीब चार साल तक मुंबई विश्वविद्यालय में अध्यापन कार्य किया था। वह वर्ष 1961 से 1972 तक धर्मयुग में सहायक सम्पादक रहे। इसके बाद उन्होंने टाइम्स ऑफ इंडिया समूह की पत्रिकाओं पराग, सारिका और दिनमान में सम्पादक के तौर पर कार्यभार संभाला। तीन साल तक वह नवभारत टाइम्स के फीचर सम्पादक भी रहे।

टाइम्स समूह से अलग होने के बाद वह छह साल तक हिन्दी के साप्ताहिक अखबार संडे मेल के प्रधान सम्पादक रहे। वर्ष 1995 से उन्होंने इंडसइंड मीडिया में बतौर निदेशक कार्य किया। नंदन को पद्मश्री, भारतेंदु पुरस्कार, अज्ञेय पुरस्कार और नेहरू फेलोशिप सहित कई पुरस्कारों से सम्मानित किया गया। उन्होंने विभिन्न विधाओं में तीन दर्जन से अधिक पुस्तकें लिखीं। उनकी प्रमुख कृतियाँ 'लुकुआ का शाहनामा', 'घाट-घाट का पानी', 'आग के रंग', 'गुजरा कहाँ कहाँ से' आदि हैं। मुंबई के संस्मरणों पर आधारित उनकी किताब 'कहना जरूरी था' अभी प्रेस में है।

मलयाला मनोरमा के मुख्य सम्पादक मैथ्यू का निधन

भारतीय मीडिया जगत की प्रमुख हस्ती मलयाला मनोरमा के मुख्य सम्पादक के०एम० मैथ्यू का निधन हो गया। वह 93 वर्ष के थे। प्रेस ट्रस्ट ऑफ इंडिया के पूर्व अध्यक्ष मैथ्यू की मृत्यु पर राष्ट्रपति प्रतिभा पाटिल, प्रधानमन्त्री मनमोहन सिंह, केरल के मुख्यमन्त्री वी०एस० अच्युतानंदन और कई प्रमुख लोगों ने शोक प्रकट किया है।

डॉ० जगदीश चंद्रिकेश का निधन

पत्रकारिता जगत् में विख्यात एवं वरिष्ठ लेखक डॉ० जगदीश चंद्रिकेश का 27 अगस्त, 2010 को आकस्मिक निधन हो गया। वे 71 वर्ष के थे।

'समकालीन साहित्य समाचार' पत्रिका के सम्पादन में मुख्य सहयोगी डॉ० चंद्रिकेश ने चित्रकला विषय में डॉक्टरेट की उपाधि प्राप्त की थी। 'भारतीय चित्रकला' पर डॉक्यूमेंट्री से लेकर दूरदर्शन और आकाशवाणी के लिए लेखन किया। हिन्दुस्तान टाइम्स समूह की पत्रिका 'कादम्बिनी' में सहायक सम्पादक पद से सेवा-निवृत्ति के बाद अनेक पत्र-पत्रिकाओं में लिखते रहे।

राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रबल समर्थक श्री मधुकरराव चौधरी का निधन

पिछले दिनों राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रबल समर्थक श्री मधुकरराव चौधरी का देहावसान हिन्दी के नि:स्वार्थ सेवकों-समर्थकों को झकझोर गया। गाँधीवादी जीवन-मूल्यों को जीने वाले श्री चौधरी सन् 1972 में राष्ट्रभाषा प्रचार-समिति, वर्धा के अध्यक्ष बने और अन्तिम क्षण तक उसी पद पर बने रहकर हिन्दी भाषा को उसका प्राप्य दिलाने के लिये संघर्ष करते रहे।

अध्येताओं, पुस्तकालयों, शिक्षा संस्थाओं

के लिए

साहित्यिक तथा विभिन्न विषयों की हिन्दी, अंग्रेजी, संस्कृत पुस्तकों का विशाल संग्रह

तीन हजार वर्ग फुट में विशाल शोरूम

विश्वविद्यालय प्रकाशन

विशालाक्षी भवन, चौक
(चौक पुलिस स्टेशन परिसर के पार्श्व में)
वाराणसी - 221 001 (उ०प्र०)
Phone & Fax : (0542) 2413741, 2413082
E-mail : vvp@vsnl.com & sales@vvpbooks.com
Website : www.vvpbooks.com

अत्र-तत्र-सर्वत्र

नहीं सज पा रही हिन्दी के माथे पर 'बिन्दी'

हिन्दी के माथे पर 'वैश्विक गौरव की बिन्दी' सज नहीं पा रही है। दुनिया में तीसरी सबसे ज्यादा बोली जाने वाली इस भाषा को संयुक्त राष्ट्र की भाषा बनाने का मंसूबा खर्च की फिक्र में अटका हुआ है। विश्व की सबसे बड़ी पंचायत में हिन्दी को जगह दिलाने की कोशिशों में भारत को न तो 97 दोस्त मिल सके हैं और न ही वह उनसे आर्थिक सहायता का भरोसा हासिल कर सका है।

हिन्दी को संयुक्त राष्ट्र की भाषा का दर्जा दिलाने के लिए भारत की ओर से सालाना 14 मिलियन डॉलर (करीब 66 करोड़ रुपये) खर्च करने होंगे। इस खर्च को लेकर विदेश नीति का प्रबन्ध सम्भालने वाला अंग्रेजीदां तन्त्र अब तक खुद को तैयार नहीं कर पाया है। हालाँकि, बरसों से टिमटिमा रही इस आस पर भारत ने संयुक्त राष्ट्र के 192 देशों को टटोला था, लेकिन कोई उत्साहजनक उत्तर नहीं मिला। संसद के मानसून सत्र में विदेशी मन्त्री एस०एम० कृष्णा ने इस बात को सदन में स्वीकार किया कि वर्तमान आर्थिक परिस्थितियों में अधिकतर सदस्य राष्ट्र संयुक्त राष्ट्र को दिए जाने वाले अंशदान में वृद्धि के पक्ष में नहीं हैं। वैसे, हिन्दी को लेकर विदेश मन्त्रालय के उत्साह का अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि विदेशी मन्त्री कृष्णा के कुर्सी सम्भालने के बाद से हिन्दी सलाहकार समिति का गठन तक नहीं हो पाया है। मन्त्रालय की पिछली हिन्दी सलाहकार समिति की सदस्य डॉ० अरुणा मुकिम कहती हैं कि प्रयासों में कुछ अड़चनें जरूर हैं, लेकिन कोशिशें देर-सबेर रंग जरूर लाएँगीं। उल्लेखनीय है कि सरकार अब हिन्दी की वकालत के लिए दुनिया भर में बिखरे अप्रवासी भारतीयों से मदद जुटाने का विचार कर रही है। संयुक्त राष्ट्र में आधिकारिक भाषा का दर्जा केवल अँग्रेजी, अरबी, चीनी, फ्रेंच, रूसी और स्पेनिश को हासिल है।

यदि भारत का प्रस्ताव परवान चढ़ता है तो उसे कर्मचारियों, साजो-सामान के निरन्तर व्यय के अलावा सभी दस्तावेज के अनुवाद का भी भारी-भरकम खर्च उठाना होगा। इस समय संयुक्त राष्ट्र में हिन्दी की उपस्थिति केवल इतनी है कि संयुक्त राष्ट्र रेडियो वेबसाइट पर हिन्दी का एक कार्यक्रम प्रस्तुत किया जाता है। हिन्दी की राह में एक बड़ी अड़चन यह भी है कि सूरीनाम, त्रिनिदाद-टोबैगो, नेपाल, मॉरीशस, फिजी जैसे देशों में, जहाँ हिन्दी समझी और कुछ सीमा तक बोली जाती है, उनमें से किसी की न तो माली हालत अच्छी है और न ही राजनीतिक प्रभाव है।

इस सूचना के साथ 'भारतीय वाङ्मय' का विनम्र सुझाव है कि यदि देश के हिन्दी भाषी राज्य मिलजुल कर यह व्यय स्वयं वहन करें तभी सार्थक परिणाम प्राप्त हो सकेगा।

मानस का उर्दू अनुवाद

वाराणसी। मजहब के दायरे से ऊपर उठकर अनेकता में एकता वाली हिन्दुस्तानी संस्कृति में पली छात्रा नाजनीन अंसारी रामचरित मानस के उर्दू अनुवाद की तैयारी में जुटी हुई है। तुलसी और कबीर की कर्मस्थली में इसने 2009 के शारदीय नवरात्र से यह काम शुरू किया। अगले डेढ़ माह में पूरा रामचरित मानस उर्दू में लिपिबद्ध हो जाएगा। फिर उसका अनुवाद होगा। बनारस के लल्लापुरा के बुनकर की इस बेटी के अनुसार सम्राट अकबर उसके प्रेरणास्रोत हैं, जिन्होंने अनुवाद विभाग की स्थापना की थी। अनुवाद की वजह बताते हुए उसने कहा कि हिन्दुस्तानी संस्कृति त्याग सिखाती है। इसकी अनूठी मिसाल भगवान राम और उनके भाई भरत और लक्ष्मण के अलावा माता सीता हैं। यह भावना हर भाषा के लोग जान जाएँ तो फिर मन्दिर या मस्जिद का विवाद ही नहीं उपजेगा। वैसे भी हर भारतीय के पूर्वज एक ही हैं। हाँ कालक्रम में सिर्फ धर्म बदले हैं पर शुरुआती अतीत तो एक ही है।

इससे पहले नाजनीन 2006 में हनुमान चालीसा और 2009 के शारदीय नवरात्र में दुर्गा चालीसा को उर्दू में लिपिबद्ध कर चुकी है।

हिन्दी की अलख जगा रहे करुणाशेखर

अपने राष्ट्र, परिवार, भाषा के लिए तो सभी करते हैं। वहीं कुछ लोग ऐसे हैं जो इन सबसे इतर सोचते और करते हैं। श्रीलंका के कोलम्बो निवासी रजकोक करुणाशेखर भी ऐसे ही कुछ लोगों में हैं। इन्होंने अपना जीवन हिन्दी के लिए समर्पित कर दिया है। इनका उद्देश्य श्रीलंका में अधिक से अधिक लोगों को हिन्दी सिखाना है। उनके इस कार्य में उनकी बेटी अनोमारणतुंग भी साथ हैं। पिता-पुत्री ने मिल कर सिंघली भाषी लोगों के लिए 16 ऐसी किताबें लिखीं हैं जिनसे हिन्दी सीखी जा सकती है। कोलम्बो में असगिरिय गम्पह में हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए 1973 में श्रीलंका हिन्दी समाज की स्थापना की गयी। यह संस्था पूरे श्रीलंका में हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए कार्य करती है। अभी तक इस समाज के माध्यम से 4622 श्रीलंका के लोगों को नि:शुल्क हिन्दी सिखायी जा चुकी है। इस संस्था के अध्यक्ष प्रो० चन्द्रसिरी पल्ली गुरु हैं। सचिव वह स्वयं हैं। राजीव गाँधी पर श्रीलंका के 22 लेखकों द्वारा लिखे गीत व अन्य सामग्री को हिन्दी में अनुवाद कर उन्होंने काँग्रेस अध्यक्ष सोनिया गाँधी को समर्पित किया था।

असल जिन्दगी के स्लमडॉग बिलियनेयर

फिल्म 'स्लमडॉग मिलियनेयर' में जिस तरह दो भाई अपने अलग-अलग रास्ते चुन लेते हैं, ठीक वैसे ही अंबानी बंधु भी अपनी-अपनी राह पर चल पड़े हैं। लेकिन यह कहानी यहीं नहीं रुकने वाली इसमें अभी कई और मोड़ आने वाले हैं। अंबानी बंधु को 'असल जिन्दगी का स्लमडॉग बिलियनेयर' बताते हुए अपनी नई पुस्तक 'अंबानी एंड संस' में एच० मेक्डोनाल्ड ने ये बातें लिखी हैं।

जब छात्रवृत्ति को बचाने तीन दिन लगातार किया काम

1950 में जब मैं छात्र था, तो मैसाच्युसेट्स इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी (एमआईटी) में अपनी छात्रवृत्ति को बचाने के लिए मैंने तीन दिन तक लगातार एक प्रोजेक्ट पर काम किया था। पूर्व राष्ट्रपति ए०पी०जे० अब्दुल कलाम ने यह रहस्योद्घाटन नार्थ ईस्टर्न रीजनल इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एंड टेक्नोलॉजी के दूसरे दीक्षांत समारोह में किया। भारत के 'मिसाइलमैन' के रूप में प्रसिद्ध कलाम ने बताया एमआईटी में मुझे और मेरे छह सहयोगियों को छोटे-मोटे हमले करने वाले एक विमान का डिजायन बनाने का काम अध्यापक श्रीनिवासन ने सौंपा था। प्रोजेक्ट की समीक्षा करने पर श्रीनिवासन ने कहा, 'कलाम तुमने मुझे निराश किया है।' कलाम ने उनसे प्रोजेक्ट में आने वाली मुश्किलों का हवाला देते हुए एक महीना समय देने का अनुरोध किया। उस दौरान कम्प्यूटर के बगैर डाटा को संजोने में बहुत मुश्किलें आती थीं। तब श्रीनिवासन ने कहा कि ''आज शुक्रवार है और मैं तुम्हें तीन दिन का समय देता हूँ। अगर सोमवार की सुबह तक प्रोजेक्ट नहीं मिला, तो तुम्हारी छात्रवृत्ति रोक दी जाएगी।'' कलाम ने बताया, ''छात्रवृत्ति को खोने के डर से मैं और मेरे सहयोगी उस रात नहीं सोए और प्रोजेक्ट में जुटे रहे। अगले दिन और रात भी खाना नहीं खाया। इसके बाद मैंने एक घण्टे का ब्रेक लिया। तीसरे दिन रविवार को मेरा प्रोजक्ट करीब-करीब पूरा होने वाला था कि मुझे लगा प्रयोगशाला में कोई है। यह प्रोफेसर श्रीनिवासन थे।''

कॉमिक्स पढ़िए और सीखिए निवेश करना

नई पीढ़ी बचत, निवेश व कर्ज जैसी वित्तीय जानकारियों से लैस हो, इसके लिए रिजर्व बैंक (आरबीआई) ने पहल की है। आरबीआई ने अपनी नई मुहिम के तहत वित्तीय जागरूकता बढ़ाने के लिए बच्चों को कॉमिक्स के जरिए बैंकिंग की जानकारी देने का इंतजाम किया है। इसके अलावा स्कूल और कॉलेजों के पाठ्यक्रमों में निवेश, बचत व कर्ज जैसे विषयों को शामिल कराया जा रहा है। इस कदम के जरिए आरबीआई का मकसद आने वाली पीढ़ी को पढ़ाई के दौरान ही बैंकिंग तन्त्र से अच्छी तरह रूबरू कराने का है। छोटे बच्चों में बैंकिंग के बारे में जागरूकता बढ़ाने के लिए राजू की कॉमिक्स सीरीज पेश की है। इसमें उन्हें बहुत ही रोचक ढंग से बैंकिंग सेवाओं के बारे में जानकारी दी गई

है। कर्नाटक सरकार ने इसी साल 7वीं, 8वीं और 9वीं कक्षा के पाठ्यक्रम में बैंकिंग को शामिल किया है। उत्तर प्रदेश सरकार से भी इस बारे में बातचीत चल रही है। एनसीईआरटी ने खुद ही वित्तीय समावेश को लेकर 9वीं, 10वीं, 11वीं और 12वीं कक्षा में उक्त विषयों को अपने पाठ्यक्रम में डाल रखा है। आरबीआई ने हर जिले के लीड बैंक को एक वित्तीय साक्षरता परामर्श प्रकोष्ठ गठित करने के लिए कहा है।

लौट रहे विदेश में पढ़ा रहे शिक्षक

देश के शीर्ष तकनीकी शिक्षा संस्थानों में शिक्षकों की कमी को पूरा करने के लिए रास्ता सहज हो गया है। पीएचडी करके विदेश के विभिन्न विश्वविद्यालयों में पढ़ा रहे बड़ी संख्या में शिक्षक भारत लौट रहे हैं। उनमें से कुछ ने विभिन्न संस्थानों में कार्यभार ग्रहण भी कर लिया है। अकेले आईआईटी कानपुर से ही ऐसे लगभग तीन दर्जन शिक्षक जुड़े हैं।

पिछले दिनों दिल्ली में हो रही आईआईटी परिषद की बैठक में शिक्षकों की कमी एक गम्भीर मुद्दा थी, परन्तु इस कमी के दूर होने का नैसर्गिक रास्ता भी निकल रहा है। स्थिति की गम्भीरता को देखते हुए कुछ दिनों पहले मानव संसाधन विकास मन्त्री कपिल सिब्बल की अगुवाई में आईआईटी निदेशक प्रो० संजय गोविंद पांडे व दूसरे सदस्यों ने अमेरिका सहित दूसरे देशों का दौरा कर वहाँ पीएचडी कर रहे या पीएचडी करके पोस्ट डॉक्टरेट फैलोशिप (पीडीएफ) में पढ़ा रहे भारतीय मूल के मेधावियों से वार्ता की थी। इसका परिणाम अब दिखने लगा है। बीते कुछ माह में आईआईटी कानपुर में जिन 40 नये शिक्षकों की नियुक्ति हुई है उनमें 80 प्रतिशत विदेशों में पढ़ा रहे भारतीय मूल के हैं।

इंटरनेट की लत बनाती है अवसादग्रस्त

वैज्ञानिकों ने एक नए शोध में बताया है कि किशोरावास्था में जो इंटरनेट का जरूरत से ज्यादा इस्तेमाल करते हैं, उनके अवसादग्रस्त होने की आशंका बढ़ जाती है। चीन के वैज्ञानिकों द्वारा किए गए इस अध्ययन के मुताबिक, वेब की दुनिया में अत्याधिक वक्त बिताने वाले किशोर इंटरनेट का कभी कभार प्रयोग करने वाले किशोरों की तुलना में डेढ़ गुना अधिक अवसादग्रस्त होते हैं।

नालंदा विश्वविद्यालय बनने का रास्ता साफ

वर्षों तक विश्व के लिए सभ्यता, संस्कृति और शिक्षा का केन्द्र रहे नालंदा विश्वविद्यालय के इतिहास को फिर से जीवित करने का रास्ता साफ हो गया है। राज्यसभा के बाद लोकसभा ने भी एकमत से नालंदा विधेयक को पारित कर दिया। केन्द्र सरकार ने आश्वासन दिया है कि इसके लिए जहाँ अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर कोशिशें शुरू हो गई हैं, वहीं केन्द्र से भी भरपूर मदद दी जाएगी।

नीलाम होगी 70 साल पुरानी कॉमिक

अलास्का का एक कॉमिक प्रकाशन अपने शानदार संग्रह में से एक नायाब कॉमिक को बेचने जा रहा है। कॉमिक प्रकाशन ने लगभग 70 वर्ष पहले प्रकाशित 'बैटमैन नंबर 1' की दुर्लभ प्रति को बेचने का फैसला किया है। शहर की माइक ह्वीट नाम की इस कम्पनी ने हेरिटेज ऑक्शन गैलरीज में 1940 की इस किताब को बेचने के लिए रखा है। इंटरनेट पर अब तक इसकी बोली 35 हजार डॉलर (करीब 16 लाख रुपये) तक पहुँच चुकी है। जबकि नीलामीघर में इसकी आधिकारिक बोली लगाई जाएगी। नीलामी में बैटमैन सीरीज की दूसरी और चौथी कॉमिक्स की भी नीलामी की जाएगी। संयुक्त रूप से इनके पाँच हजार डॉलर (करीब ढाई लाख रुपये) में बिकने की उम्मीद है।

कैंसर पर किताब लिखेंगी लीसा रे

कनाडा में रहने वाली बॉलीवुड अभिनेत्री लीसा रे को फिल्मी दुनिया में वापसी की जल्दी नहीं है। वह कैंसर के प्रति जागरूकता फैलाने और इस विषय पर किताब लिखने के प्रति ज्यादा उत्सुक हैं। प्लाज्मा कोशिकाओं के एक दुर्लभ कैंसर के इलाज के बाद स्वस्थ जीवन जी रही लीसा कहती हैं कि वह आगे भी काम करती रहेंगी लेकिन यह अलग होगा।

'मिडनाइट्स चिल्ड्रेन' पर फिल्म

सलमान रुश्दी के बुकर पुरस्कार प्राप्त उपन्यास 'मिडनाइट्स चिल्ड्रेन' पर दीपा मेहता के निर्देशन में फिल्म बन रही है जिसमें अभिनेत्री सोहा अली खान भी नजर आएँगी। फिल्म में पहले से शबाना आजमी, नंदिता दास, सीमा विस्वास और इरफान खान जैसे प्रसिद्ध कलाकारों को लिया जा चुका है।

पुस्तक पढ़ने की रुचि को बढ़ावा

छात्रों में पुस्तक पढ़ने की रुचि को बढ़ावा देने के लिए केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड ने सतत समग्र मूल्यांकन के तहत छात्रों को पाठ्यपुस्तक के अलावा अपनी पसन्द का कोई एक उपन्यास या किताब पढ़ने को कहा है। इसे परीक्षा के मूल्यांकन में शामिल किया जाएगा। इसमें संयुक्त राष्ट्र शैक्षणिक, वैज्ञानिक एवं सांस्कृतिक संगठन (यूनेस्को) और टाइम्स फाउंडेशन की पुस्तक दान पहल को शामिल किया गया है। इस पहल का उद्देश्य स्कूलों, लाइब्रेरी में पुस्तकों की संख्या बढ़ाना, छात्रों को पुस्तकें पढ़ने के लिए प्रेरित करना, युवाओं में साहित्यिक गतिविधियों को बढ़ावा देना, मोबाइल लाइब्रेरी बनाना तथा स्थानीय भाषा से जुड़े साहित्य के माध्यम से सामुदायिक भावना को मजबूत बनाना है।

आगामी प्रकाशन

कहानी संग्रह

सम्पादन

हिन्दी विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

साहित्य के विभिन्न रूपों में 'कहानी' को अपने विधागत गुणों के चलते अधिक लोकप्रियता मिली है। कविता की सुदीर्घ परम्परा के परिप्रेक्ष्य में यह उल्लेखनीय है कि कहानी ने वैविध्य, कलात्मकता और विस्तार को अल्प उतार-चढ़ाव में ही अर्जित किया है। कविता को साहित्य की 'मूल' विधा माना जाता है, पर कथा की समानान्तर और सहवर्ती या पूरक सत्ता आदि समय से ही रही है। प्राचीन महाकाव्य—कविता और कथा के समन्वय से रचे गए थे। इस अर्थ में कहानी 'आदि' विधा है। कहानी वैसे भी सर्वकालिक है—कब और कहाँ जन्मी, किसे पता! उसकी एक विरासत हर देश और जाति में मिलेगी। भारत जैसे महादेश में इसकी समृद्ध विरासत पर भला किसे संदेह होगा! अत: साहित्य की आधुनिक गद्य-विधाओं में हिन्दी कहानी की परम्परा भारतीय प्राचीन साहित्य, लोक-कथा और आख्यानों की वाचिक परम्परा से गहरे सूत्रबद्ध है। इस विरासत को जब पश्चिमी कहानी के रूप-विन्यास और कला का प्रभाव मिला, तो कहानी सृजन की नवीन आधुनिक विधा के रूप में प्रस्फुटित हुई। शीघ्र ही हिन्दी कहानी तर्कातीत, अतिप्राकृत, अतिरंजित और उपदेश-शिक्षा की आस्थाओं के युग से निकलकर तर्कसंगत विचारों और सृजन-विवेक के आलोक में गतिशील होने लगी।

प्रस्तुत सोलह कहानियों का यह संकलन प्रसाद और प्रेमचंद से लेकर उदय प्रकाश तक की कहानी-परम्परा का प्रतिनिधित्व सुलभ कराता है। किसी भी संकलन में कहानी-संग्रह की एक सीमा होती है—जिसका आशय यह नहीं कि एक विधा की सतत परम्परा में प्रतिनिधि कहानियाँ और नहीं हो सकतीं! मूलत: यह कहानी-संकलन, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के स्नातकोत्तर (हिन्दी) पाठ्यक्रम को ध्यान में रखते हुए 'पाठ्य-पुस्तक' के रूप में तैयार हुआ है। फिर भी इस चयन में हिन्दी कहानी के सुविख्यात और सुपरिचित कहानीकारों की प्रतिनिधि कहानियाँ एक साथ उपलब्ध हैं—अत: कहानी में अभिरुचि रखने वाले किसी भी पाठक के लिए भी यह समान रूप से उपादेय हो सकता है।

इस संकलन में प्रसिद्ध कहानीकारों—चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी', प्रेमचंद, प्रसाद, जैनेन्द्र, यशपाल, अज्ञेय, रेणु, अमरकांत, भीष्म साहनी, शिवप्रसाद सिंह, हरिशंकर परसाई, मन्नू भण्डारी, शेखर जोशी, निर्मल वर्मा, ज्ञानरंजन, काशीनाथ सिंह, दूधनाथ सिंह, उदयप्रकाश की प्रसिद्ध कहानियों का समावेश है।

संगोष्ठी/लोकार्पण

बढ़ी हिन्द स्वराज की प्रासंगिकता

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय स्थित दर्शन एवं धर्म विभाग में 24 सितम्बर को वर्तमान सामाजिक परिवेश में हिन्द स्वराज की प्रासंगिकता पर सविस्तार विमर्श चला। वक्ताओं ने गम्भीरता व तेजी से बदलते मौजूदा परिदृश्य में हिन्द स्वराज के मूल भावों को आत्मसात करने की वकालत की। सुरुचि कला समिति एवं दर्शन एवं धर्म विभाग के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित इस दो दिवसीय संगोष्ठी के उद्घाटन अवसर पर पूर्व सांसद प्रो० रामजी सिंह ने कहा कि लोग आज हिन्द स्वराज को भूल चुके हैं। हिन्द स्वराज को लेकर गाँधी व नेहरू में मतभेद रहा। इसी का परिणाम है कि हिन्द स्वराज को कांग्रेस के एजेंडे में गम्भीरता से नहीं रखा जा सका। उन्होंने कहा कि यूरोप की विसंगतियों व वहाँ की चकाचौंध से व्याकुल होकर महात्मा गाँधी ने महज दस दिनों में हिन्द स्वराज की रचना की थी। अंग्रेजों ने इसे जब्त भी कर लिया था। उस समय बुद्धिजीवियों एवं शासकों के बीच यह चर्चा का विषय भी था। प्रो० सिंह ने आज के हालात पर कहा कि पर्यावरण संकट, मौसम में तीव्र परिवर्तन, ओजोन परत में छिद्र के बढ़ने जैसी समस्याओं के इस दौर में बापू के हिन्द स्वराज की प्रासंगिकता स्वयं सिद्ध हो जाती है। प्रो० देवब्रत चौबे ने कहा कि वैश्वीकरण सभ्यता देश का नाश करने वाली है। बापू का मानना था कि उत्पादन उतना ही हो जितने की आवश्यकता है, परन्तु आज हालात दूसरे हैं। अध्यक्षता प्रो० चन्द्रकला पाडिया ने की।

खिचड़ी भाषा दिमागी रूप से बना रही बीमार : नामवर सिंह

प्रख्यात आलोचक प्रो० नामवर सिंह 'हिन्दी' की हालत पर काफी व्यथित थे। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में हिन्दी सप्ताह समापन समारोह में बतौर मुख्य अतिथि शिरकत कर रहे प्रो० सिंह ने स्पष्ट कहा कि भाषाओं में मिश्रण लोगों को दिमागी रूप से बीमार बना रहा है। सूचना क्रान्ति की वजह से हिन्दी का बाजारीकरण हो रहा है और यह उसके चरित्र का क्षय है। काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के उडप्पा सभागार में आयोजित समारोह में उन्होंने कहा कि भारत ही एक मात्र ऐसा देश है जहाँ राजभाषा हिन्दी का समारोह मनाया जाता है। कहा कि हिन्दी के उत्थान के लिए खानापूर्ति करने के बजाय बृहत्तर योजनाएँ बनाने की जरूरत है।

प्रो० सिंह का कहना था कि उपनिवेशवाद के चलते अंग्रेजी हमारे देश में आई और अब नव-उपनिवेशवाद की वजह से हिंगलिश आ रही है। नई अर्थव्यवस्था लकवे के समान है जिसका सबसे पहले असर जुबान पर होता है, जो हिंगलिश के रूप में परिलक्षित हो रही है। अध्यक्षता करते हुए कुलपति प्रो० डी०पी० सिंह ने कहा कि हिन्दी देश का गौरव है। हिन्दी के साथ ही अन्य भाषाओं को भी सीखना चाहिए। इस दौरान हिन्दी में उत्कृष्ट कार्य के लिए सेंट्रल हिन्दू गर्ल्स स्कूल को राजभाषा वैजयंती प्रदान की गई। इसके अलावा हिन्दी निबन्ध, वाद-विवाद, पत्राचार, टिप्पणी, अनुवाद प्रतियोगिता के विजेताओं के साथ ही हिन्दी में कार्यलयीन कार्य करने वाले कर्मचारियों को पुरस्कृत किया गया।

प्रेमचंद की कहानियाँ : दलित सरोकार

'मुंशी प्रेमचंद स्मारक शोध एवं अध्ययन केन्द्र' लमही, वाराणसी के तत्वावधान में 'प्रेमचंद की कहानियाँ : दलित सरोकार' विषय पर एक संगोष्ठी काशी हिन्दू विश्वविद्यालय स्थित भारत कला भवन में आयोजित हुई। इस अवसर पर प्रख्यात आलोचक निर्मला जैन ने कहा कि प्रेमचंद की रचनाओं का संघर्ष उपनिवेशवाद के खिलाफ है। यह संघर्ष किसी जाति विशेष के खिलाफ नहीं बल्कि वृत्ति के खिलाफ था। उन्होंने प्रेमचंद की 'सद्गति', 'ठाकुर का कुआँ', 'दूध का दाम' और 'कफ़न' कहानी का सन्दर्भ लेते हुए बदलते दलित चेतना के सरोकारों का उल्लेख किया। प्रेमचंद द्वारा घीसू, माधव जैसे निकृष्ट कोटि के दलित पात्र सृजित करने के आरोप पर विराम लगाते हुए उन्होंने बताया कि उनके साहित्य में सनातनी ब्राह्मणवादी मानसिकता के निकृष्ट स्वरूप भी परिलक्षित हुए हैं।

'मुंशी प्रेमचंद स्मारक शोध एवं अध्ययन केन्द्र' लमही, वाराणसी के सदस्य सचिव प्रो० कुमार पंकज और संयोजक प्रो० विजयबहादुर सिंह ने भी अपने विचार व्यक्त किये। अध्यक्षता काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो० धीरेन्द्रपाल सिंह ने की।

'हंस' पत्रिका की 25वीं वार्षिक गोष्ठी

नई दिल्ली स्थित एवान-ए-गालिब के सभागार में हंसाक्षर ट्रस्ट एवं गालिब इंस्टीट्यूट के संयुक्त तत्वावधान में अमर कथाशिल्पी प्रेमचंद की जयंती तथा 'हंस' पत्रिका के 25वें वर्ष के अवसर पर आयोजित समारोह की अध्यक्षता राजेन्द्र यादव ने की। चर्चा का केन्द्र आज का राजनीतिक वातावरण और नक्सलवाद रहा।

विचार गोष्ठी का आरम्भ करते हुए राजेन्द्र यादव ने कहा कि राजसत्ता, विचारधारा और धर्म द्वारा की गई हिंसा हिंसा नहीं मानी जाती। हिंसा के मूल में विचार होता है जिससे हिंसा को जायज ठहराया जाता है। धर्म अतीत को देखता है इसलिए अतीत को सामने लाने के लिए हिंसा करता है। विचार भविष्य की ओर देखता है। सत्ता यथास्थिति बनाए रखने के लिए हिंसा करती है। कार्यक्रम का संचालन आनंद प्रधान ने किया।

घर से हो क्रान्ति की शुरुआत

क्रान्ति की शुरुआत घर से ही होनी चाहिए और घर के केन्द्र में बहू एवं बेटी होती है। यह कहना था प्रख्यात आलोचक प्रो० नामवर सिंह का। वह काशी हिन्दू विश्वविद्यालय स्थित सामाजिक विज्ञान संकाय में 'स्त्री और संस्कृति के प्रश्न' विषय पर व्याख्यान दे रहे थे। महिला अध्ययन एवं विकास केन्द्र के तत्वावधान में आयोजित इस व्याख्यान में प्रो० सिंह ने कहा कि जब तक हमारे घर में रहने वालों की सोच में परिवर्तन नहीं आएगा तब तक समाज एवं देश नहीं बदलेगा। उन्होंने स्त्री चेतना जागृत करने के लिए आधुनिक हिन्दी साहित्य को पाठ्यक्रम में सम्मिलित करने पर जोर दिया। अध्यक्षता प्रो० अवधेश प्रधान ने की।

संस्कृत सप्ताह का आयोजन

नई दिल्ली स्थित राष्ट्रीय संग्रहालय के सभागार में राष्ट्रीय संस्कृत संस्थान और लालबहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विद्यापीठ के संयुक्त तत्त्वावधान में संस्कृत दिवस समारोह का आयोजन किया गया। समारोह की अध्यक्षता कर्नाटक के पूर्व राज्यपाल त्रिलोकीनाथ चतुर्वेदी ने की। मुख्य अतिथि मानव संसाधन विकास मन्त्रालय की संयुक्त सचिव (भाषा) श्रीमती अनीता भटनागर जैन, राष्ट्रीय सूचना केन्द्र के अधिकारी गौतम घोष, जिन्होंने संस्थान के वेबसाइट तथा ई-ग्रन्थालय की स्थापना की, विशेष रूप से उपस्थित थे। राष्ट्रीय संस्थान के कुलपति डॉ० राधावल्लभ तथा विद्यापीठ के कुलपति प्रो० वाचस्पति उपाध्याय ने सभा को सम्बोधित किया और संस्कृत के बढ़ते प्रचार-प्रसार पर प्रकाश डाला।

समारोह में अनेक विद्वानों को सम्मानित करते हुए अनेक पुस्तकों का विमोचन किया गया। मुख्य अतिथि श्रीमती अनीता भटनागर जैन ने वेबसाइट और ई-ग्रन्थालय का उद्घाटन किया। सामवेद और तत्त्वचिंतामणि जैसे महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों के आडियो-वीडियो का भी विमोचन किया गया।

जबलपुर में पहल-गोष्ठी

जबलपुर की पहल-गोष्ठी में सुप्रसिद्ध रंग-निर्देशक वसंत काशीकर ने 'कहानी में मंचन की सम्भावनाएँ' विषय पर अपने व्याख्यान में कहा कि हमें रंगमंच के तीनों पक्षों पर नजर डालनी होगी—लेखन, मंचन, दर्शक। इन तीनों के सामंजस्य को ध्यान में न रखते हुए हिन्दी नाटककार नाटक तो लिख देता है, पर वे अधिकतर मंचन योग्य नहीं होते। गोष्ठी के दूसरे सत्र में कथाकार पंकज स्वामी ने अपनी कहानी 'इंटरनेट' का पाठ किया। गोष्ठी की अध्यक्षता वरिष्ठ कथाकार ओम ठाकुर ने की।

नरेन्द्र मोहन
एक बहुआयामीय प्रतिभा

सुप्रसिद्ध साहित्यकार डॉ० नरेन्द्र मोहन के तीन चौथाई शती पार करने के अवसर पर हाल ही में 'शब्द सेतु' दिल्ली की ओर से एक भव्य कार्यक्रम का संयोजन साहित्य अकादमी में किया गया। मुख्य अतिथि थे उर्दू के प्रख्यात कहानीकार श्री जोगिन्दर पाल और अध्यक्ष थे प्रसिद्ध साहित्यकार डॉ० रामदरश मिश्र तथा पंजाबी के कवि-आलोचक डॉ० सतिन्दर सिंह नूर।

नरेन्द्र मोहन की सद्य प्रकाशित तीन पुस्तकों 'मंच अंधेरे में' (नाटक), 'साये से अलग' (डायरी), 'फ्रेम से बाहर आतीं तस्वीरें' (संस्मरण), रजनी बाला द्वारा सम्पादित नरेन्द्र मोहन पर केन्द्रित संस्मरण पुस्तक 'स्मृति में साथ' और उनके साहित्य पर केन्द्रित 'कल्पांत' पत्रिका के विशेषांक का लोकार्पण करते हुए श्री जोगिन्दर पाल ने नाटकों, डायरियों और कविताओं में सन्नाटे में बजते शोर और मौन की चीख़ की ध्वनियों को सुने जाने पर जोर दिया।

डॉ० रामदरश मिश्र ने कहा कि नरेन्द्र मोहन एक लम्बे समय से लेखकीय बिरादरी के सक्रिय सदस्य रहे हैं और एक लम्बे दौर में उन्होंने एक व्यक्ति और एक लेखक के तौर पर गहरी विश्वसनीयता अर्जित की है।

तत्पश्चात् नरेन्द्र मोहन की लोकार्पित पुस्तकों पर आयोजित परिचर्चा में सर्वश्री डॉ० हरदयाल, डॉ० महीप सिंह, मृदुला गर्ग, रवीन्द्र कालिया, बाल स्वरूप राही आदि विशिष्ट जनों ने अपने विचार व्यक्त किये।

साहित्य-मनीषी पं० रामानन्द शर्मा की 109वीं जयंती

चेन्नई स्थित साहित्यानुशीलन समिति ने हिन्दी के उद्भट विद्वान्, प्रबुद्ध समीक्षक और समिति-संस्थापक पं० रामानन्द शर्मा की 109वीं जयंती मनायी। समिति के अध्यक्ष डॉ० इन्दरराज बैद ने कहा कि रामानन्द शर्मा उन्नीस वर्ष की अवस्था में सन् 1920 में बिहार से मद्रास आकर हिन्दी के प्रचार अभियान से जुड़े। प्रचार कार्य के साथ-साथ भाषा-साहित्य की सर्जनात्मक सेवा भी उन्होंने की। तत्कालीन मद्रास राज्य की हिन्दी पत्रिका 'दक्खिनी हिन्द' के सम्पादक बने और भारतीय साहित्य के अनुशीलन-अनुसन्धान हेतु सन् 1952 में साहत्यानुशीलन समिति की स्थापना की। दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा के लिए शब्दकोशों और पाठ्यपुस्तकों का निर्माण भी किया।

'किसी और ही तरह' का लोकार्पण

गुजरात विद्यापीठ के हिन्दी भवन की ओर से ओमप्रकाश उदासी के कविता-संग्रह 'किसी और ही तरह' का लोकार्पण सम्पन्न हुआ। समारोह की अध्यक्षता की साहित्यकार डॉ० केशुभाई देसाई ने। 'भवन' के संयोजक डॉ० रजनीकान्त जोशी ने काव्य प्रवृत्तियों का परिचय दिया।

23वाँ अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन—पाण्डिचेरी

राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी की 141वीं जयन्ती के अवसर पर एवं स्वतन्त्रता की 63वीं वर्षगाँठ के उपलक्ष्य में दिनांक 2 से 4 अक्टूबर 2010 को पाण्डिचेरी में 23वाँ अखिल भारतीय राजभाषा सम्मेलन, राज्यभाषा प्रदर्शनी, राष्ट्रीय साहित्य संगोष्ठी, विशेष हिन्दी प्रशिक्षण कार्यशाला राष्ट्रीय कवि सम्मेलन आयोजित किया गया। सम्मेलन में भारत सरकार के मन्त्रालयों, विभागों, उपक्रमों, निगमों, बैंकों आदि के वरिष्ठ कार्यपालक, राज्य सरकारों के प्रतिनिधि भारतीय भाषाओं के वरिष्ठ साहित्यकार सम्मिलित हुए। सम्मेलन के उद्घाटन-सत्र के मुख्य अतिथि त्रिपुरा के महामहिम राज्यपाल डॉ० डी० वॉय० पाटिल तथा पाण्डिचेरी के उपराज्यपाल डॉ० इकबाल सिंह थे। दिनांक 3 एवं 4 अक्टूबर को राष्ट्रीय साहित्य संगोष्ठी का आयोजन हुआ। जिसका मुख्य विषय था—'भारतीय भाषाओं के उन्नयन एवं विकास में तकनीकी प्रशिक्षण की अनिवार्यता'।

अध्यक्ष, राष्ट्रीय हिन्दी अकादमी एवं हिन्दी के सुपरिचित कवि तथा उपन्यासकार श्री स्वदेश भारती ने कहा कि भारतीय भाषाओं से हिन्दी में 10 पुस्तकें तथा हिन्दी से भारतीय भाषाओं में 10 पुस्तकों के प्रकाशन हेतु अनुवाद का कार्य चल रहा है जिसमें कोंकणी, ओड़िया, नेपाली, मराठी, बंगला, तमिल, तेलुगु, मलयालम, कन्नड़ आदि भाषाओं की रचनाएँ संग्रहीत होंगी। अकादमी द्वारा विश्व कवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर, उड़िया साहित्य के जनक फ़कीर मोहन सेनापति, तमिल के महाकवि सुब्रमण्यम् भारती, हिन्दी के महाकवि जयशंकर प्रसाद पर वृत्त-चित्र बनाने का कार्यक्रम तैयार किया जा रहा है। राष्ट्रीय हिन्दी अकादमी का दक्षिण पूर्व क्षेत्रीय कार्यलय पोर्टब्लेयर, अंडमान, भोपाल, रायपुर तथा नीदरलैण्ड (हालैण्ड) में अपना कार्य अच्छे ढंग से कर रहे हैं। अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय तथा उच्च शिक्षा शोध संस्थान स्थापित करने का अकादमी का प्रयास है।

भारतीय पेट्रोलियम संस्थान में 'राजभाषा हिन्दी विशिष्ट व्याख्यानमाला' के छठे व्याख्यान का आयोजन

भारतीय पेट्रोलियम संस्थान, देहरादून के राजभाषा अनुभाग द्वारा आयोजित सतत कार्यक्रमों की श्रृंखला में 'राजभाषा हिन्दी विशिष्ट व्याख्यानमाला' के 'छठे व्याख्यान' का आयोजन गत दिवस किया गया।

इस अवसर पर 'हिन्दी मीडिया : वैश्विक परिदृश्य' विषय पर बोलते हुए मुख्य अतिथि, प्रसिद्ध मीडिया विशेषज्ञ एवं साहित्यकार डॉ० कृष्ण कुमार रत्तू, चण्डीगढ़ ने सभी का आह्वान किया कि वे हिन्दी के नए चेहरे को स्वीकार करें क्योंकि वही रूप हिन्दी के वैश्विक स्वरूप से जोड़ने वाला रूप है। डॉ० रत्तू का कहना था कि हिन्दी का सांस्कृतिक आवरण भारतीयता से ओत-प्रोत है। हिन्दी जीवन की गति को जिन्दा रखने का कार्य करती है। इसलिए हमें याद रखना चाहिए कि हिन्दी यदि नहीं रहेगी तो देश का सेतु कम हो जाएगा। इसे हमें राष्ट्र-गीत की तरह सम्मान देना चाहिए। हिन्दी को हमें कम नहीं आँकना चाहिए क्योंकि इसी में देश की मिट्टी की खुशबू और विरासत है और यदि हमने इसे बचाने के लिए कुछ नहीं किया तो आने वाली पीढ़ियाँ हमसे यही प्रश्न करेंगी। मीडिया में हिन्दी की भूमिका पर बोलते हुए डॉ० रत्तू ने वर्तमान समय को 'हिन्दी के सुनहरे दौर' की संज्ञा देते हुए कहा कि टीवी धारावाहिकों का प्रभाव हिन्दी की ताकत का प्रमाण है। जहाँ विश्व की 647 भाषाएँ मरणासन्न हैं, वहीं हिन्दी उन 84 भाषाओं में है, जो जीवित हैं। हमारे देश के परिप्रेक्ष्य में भारत के एक से दूसरे कोने तक हिन्दी का एक सेतु बना हुआ है।

आने वाले युग में इंटरनेट भाषा के रूप को और भी बदलेगा। इंटरनेट पर हिन्दी में लिखे जाने वाले ब्लॉग आज कुल ब्लॉगों का 3 प्रतिशत है और अगले वर्ष तक ये 7 प्रतिशत हो जाएँगे। इससे भाषा में और भी अधिक क्रान्ति आएगी। इसलिए हमें सोच व भाषा को बदलना व लचीला बनाना होगा ताकि विज्ञान की तरक्की आम आदमी के पास उसकी भाषा में पहुँचे। हिन्दी में दूसरी भाषाओं के शब्द आने देने चाहिए।

समारोह के संचालक व संस्थान के वरिष्ठ हिन्दी अधिकारी, डॉ० दिनेश चमोला ने कहा कि वह भाषा जिसकी जड़ें लोक के हृदयों में अवस्थित होती हैं, कभी नहीं मर सकती। लोक के पोषण से भाषा समर्थवान व ऊर्जावान होती है। हिन्दी इस शक्ति व शब्द की दृष्टि से सर्वथा सक्षम व सर्वग्राह्य भाषा है।

उच्च महिला शिक्षा पर संगोष्ठी

जमशेदपुर वीमेंस कॉलेज की संस्थापिका स्व० श्रीमती पेरिन सी० मेहता के जन्मदिन पर एक संगोष्ठी हुई। विषय था—'उच्च महिला शिक्षा : दशा और दिशा'। इसका आयोजन पूर्ववर्ती छात्रा संघ एवं शिक्षा संकाय ने किया था। मुख्य अतिथि थे वरिष्ठ साहित्यकार एवं कॉलेज के पूर्व आचार्य डॉ० बच्चन पाठक 'सलिल'।

डॉ० सलिल ने कहा कि महिलाओं को तकनीकी शिक्षा दी जाय, पर उनमें सांस्कृतिक और मानवीय मूल्यों के प्रति निष्ठा जगाई जाय। आज संवेदना शून्य होती उच्च शिक्षा की प्रवृत्ति पर उन्होंने चिन्ता व्यक्त की। अगले सत्र से

गाँधीवादी अध्ययन के प्रावधान पर उन्होंने प्रसन्नता व्यक्त की।

फिर दोहराया : बिनु निज भाषा ज्ञान के मिटत न हिय को शूल

वाराणसी में भारतीय नवजागरण के उन्नायक भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की जयन्ती पर 12 सितम्बर को उनके संदेशों को याद किया गया। विभिन्न गोष्ठियों मे उनके कृतित्व व व्यक्तित्व का स्मरण कर आदर्शों को आत्मसात किए जाने की जरूरत पर बल दिया गया। नागरी प्रचारिणी सभा में आयोजित जयन्ती समारोह में बतौर मुख्य अतिथि डॉ० गिरीशचन्द्र चौधरी ने कहा कि भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का निज भाषा की उन्नति का संदेश देश की स्वतन्त्रता का मूलमन्त्र था। अध्यक्षता पूर्व न्यायाधीश गणेशदत्त दूबे ने की। विशिष्ट अतिथि रहे श्रीकृष्ण तिवारी। हरिश्चन्द्र इण्टर कॉलेज में जयन्ती समारोह में बतौर मुख्य अतिथि प्रो० राधेश्याम दूबे ने कहा कि भारतेन्दु बाबू हिन्दी के अवतार थे। अध्यक्षता कॉलेज के प्रबन्धक डॉ० गिरीश चन्द्र चौधरी ने की।

दिल से अपनाएँ हिन्दी को : प्रो० पंकज

वाराणसी, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में हिन्दी विभाग के पूर्व अध्यक्ष प्रो० कुमार पंकज ने कहा कि हिन्दी को दिल से अपनाने की जरूरत है। सिर्फ दिखावा करने से हिन्दी को बढ़ावा नहीं मिल सकता। 14 सितम्बर को हिन्दी दिवस मनाने से काम नहीं चलेगा। हमारे लिए हर दिन राजभाषा दिवस होना चाहिए। प्रो० पंकज डीरेका में वैश्वीकरण के परिप्रेक्ष्य में हिन्दी के विकास की सम्भावना विषय पर आयोजित संगोष्ठी में बोल रहे थे।

याद रहे हिन्दी की ताकत उसकी बोलियाँ हैं

आज से लगभग 150 साल पहले हमने साम्राज्यवाद से एक जंग लड़ी थी और उसमें हमें शिकस्त मिली थी। इसकी कई वजहें थीं, मगर एक वजह आपसी संवाद का कायम न होना भी था। मगर साठ साल पहले आजादी के युद्ध में मिली फतह संवाद के एक सामान्य माध्यम का भी परिणाम थी जिसने हिन्दी क्षेत्र के साथ-साथ पूरे देश की आत्मा का स्पर्श किया था। यह माध्यम थी हिन्दी भाषा जिसने अपनी शक्ति का संधान बोलियों से संवेदना और सरसता ग्रहण कर किया था। यह हमारी राष्ट्रीयता और भविष्य के सपने का भी प्रतीक थी। आज के इस विखण्डनवादी दौर में हर सपना खण्डित होने का शिकार हो रहा है। हिन्दी की एकता और अखण्डता पर भी प्रश्न खड़े किए जा रहे हैं. उसकी ताकत रही उसकी बोलियों को उससे अलगाने का प्रयत्न चंद स्वार्थी लोग कर रहे हैं। यह संकट बौद्धिक साम्राज्यवाद की कारस्तानी है जिसने हमारे सामने एक गम्भीर चुनौती प्रस्तुत की है। इस विषय पर कोलकाता की साहित्यिक सांस्कृतिक संस्था 'अपनी भाषा' ने देशभर के बुद्धिजीवियों और संस्कृति कर्मियों से संवाद स्थापित करने का संकल्प लिया है। इसी सिलसिले को आगे बढ़ाते हुए ''हिन्दी, उसकी बोलियाँ और संविधान की आठवीं अनुसूची'' विषय पर नई दिल्ली स्थित गाँधी शान्ति प्रतिष्ठान में एक राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन हुआ। दो सत्रों में आयोजित प्रथम सत्र की अध्यक्षता वरिष्ठ कथाकार हिमांशु जोशी ने की। विषय प्रवर्तन करते हुए 'अपनी भाषा' के अध्यक्ष प्रो० अमरनाथ ने बोलियों की स्वायत्तता के जरिए अपनी राजनैतिक महत्त्वाकांक्षा की पूर्ति की निन्दा करते हुए इसे घातक प्रवृत्ति करार दिया। उन्होंने कहा कि बोलियों को भाषा का दर्जा मिलते ही अलग प्रदेश की माँग उठने लगती है। हिन्दी को राष्ट्रीय भाषा बनाने में संख्याबल का ही योगदान अधिक है। बोलियों को समानान्तर भाषा का दर्जा दिए जाने से हिन्दी का संख्या बल घट जाएगा। तब संयुक्त राष्ट्र की भाषा बनना तो दूर उसके राष्ट्रीय स्वरूप पर भी शंका व्यक्त होने लगेगी।

इस सत्र में समीक्षक डॉ० कमल किशोर गोयनका, सम्पादक प्रभाकर श्रोत्रिय, मृदुला सिन्हा आदि ने विचार व्यक्त किये।

अपने अध्यक्षीय वक्तव्य में हिमांशु जोशी ने भारत को विडम्बनाओं का देश कहा। उन्होंने कहा कि जहाँ हम एक तरफ चीजों को स्थापित करते हैं तो दूसरी तरफ उन्हें विखंडित भी करते हैं। बोलियाँ हिन्दी को सरसता देती हैं। हिन्दी से इन्हें अलग करने के पीछे पश्चिमी दुनिया का हाथ है। हिन्दी के होने के लिए भोजपुरी, राजस्थानी, छत्तीसगढ़ी, अवधी, ब्रज आदि का होना भी जरूरी है।

दूसरे सत्र की अध्यक्षता भोपाल के डॉ० कैलाशचन्द्र पंत ने की। सत्र के प्रथम वक्ता वेद प्रताप वैदिक ने इस समस्या को एक सांस्कृतिक संकट के रूप में लेने का आग्रह किया। इस द्वितीय सत्र में प्रो० चमनलाल रत्तू, कृष्णदत्त पालीवाल आदि ने विचार व्यक्त किये। अपने अध्यक्षीय वक्तव्य में कैलाश चन्द्र पंत ने संविधान में इण्डिया और भारत शब्दों पर बोलते हुए कहा कि इससे देश में दो धाराएँ उत्पन्न हुईं जो समानान्तर संस्कृति की तरह हैं।

'पूरी दुनिया की जबान बन सकती है हिन्दी'

हिन्दी पूरी दुनिया की भाषा बन सकती है। हिन्दी ने अंग्रेजी की ही तरह दूसरी अन्य भाषाओं के शब्दों को अपनी भाषा में ढालना प्रारम्भ कर दिया है। भारत की वास्तविक भाषा हिन्दुस्तानी है, जो कि भारत की हर जुबान की भाषा है। उक्त विचार हिन्दी के अध्येता अमेरिका से आए प्रो० क्रिस्टोफर किंग ने व्यक्त किए। प्रो० किंग काशी हिन्दू विश्वविद्यालय भोजपुरी अध्ययन केन्द्र की ओर से हिन्दी और उर्दू विषय पर आयोजित व्याख्यान में बतौर मुख्य वक्ता बोल रहे थे।

अध्यक्षता हिन्दी विभाग के प्रो० बलराज पाण्डेय ने की। कार्यक्रम का संचालन केन्द्र के समन्वयक प्रो० सदानन्द शाही ने किया। इस अवसर पर प्रो० अवधेश प्रधान, प्रो० अशोक कौल, प्रो० आनन्द शंकर सिंह, मृदुला सिन्हा, डॉ० कृष्णमोहन, डॉ० ध्रुव कुमार आदि उपस्थित थे।

संस्कृत कवि सम्मेलन आयोजित

26 अगस्त को दिल्ली संस्कृत अकादमी में संस्कृत दिवस के अवसर पर संस्कृत कवि सम्मेलन और समाराधक सम्मान समारोह का आयोजन किया गया। मुख्य अतिथि के रूप में हरियाणा संस्कृत अकादमी के निदेशक श्री रामेश्वर दत्त शर्मा ने सम्मेलन को सम्बोधित करते हुए कहा कि भाषा का सामर्थ्य ही जीवन है। सम्मेलन में सर्वश्री वागीश दिनकर, रमेश कुमार पाण्डे, उमा त्रिपाठी आदि कवियों ने भाग लिया।

परिचर्चा आयोजित

26 अगस्त को रूपा एण्ड कम्पनी के प्रकाशन जगत् में 75वें वर्ष में प्रवेश के अवसर पर 'भारत में पुस्तकों का भविष्य' विषय पर आयोजित एक परिचर्चा में सभी विद्वान् वक्ताओं ने हिन्दी और पुस्तकों के बेहतर भविष्य की बात कही। परिचर्चा में भाग लेने वाले अंग्रेजी के सभी लेखकों ने माना कि हिन्दी बढ़ रही है। इस अवसर पर वक्ता लेखकों ने रूपा से प्रकाशित अपनी पुस्तकों का विमोचन भी किया। वक्ताओं में सर्वश्री लालकृष्ण आडवाणी, जसवंत सिंह, वीरप्पा मोइली गुलजार, मार्क टुली, एम०जे० अकबर के साथ रस्किन बॉण्ड और चेतन भगत जैसे पुरानी और नई पीढ़ी के लेखक थे।

'खामोशी चुप कहाँ' कृति लोकार्पित

22 अगस्त को लखनऊ में उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान के निराला सभागार में युवा कवि श्री अशोक पाण्डेय 'अनहद' की तृतीय काव्य कृति 'खामोशी चुप कहाँ' का लोकार्पण सम्पन्न हुआ। कार्यक्रम की अध्यक्षता श्री गोपाल चतुर्वेदी ने की।

पुस्तक का लोकार्पण सम्पन्न

8 सितम्बर को इलाहाबाद विश्वविद्यालय में स्व० डॉ० चित्रा चतुर्वेदी 'कार्तिका' की प्रथम पुण्य-तिथि पर उनके व्यंग्य लेखों तथा उनके पिता न्यायमूर्ति स्व० ब्रजकिशोर चतुर्वेदी की व्यंग्य कविताओं के संयुक्त संकलन 'हास्य-व्यंग्य के रंग-ढंग, पिता-पुत्री के संग-संग' का लोकार्पण न्यायमूर्ति श्री प्रेमशंकर गुप्ता एवं उत्तर प्रदेश भाषा संस्थान के अध्यक्ष, प्रसिद्ध व्यंग्यकार श्री गोपाल चतुर्वेदी द्वारा किया गया।

पुस्तक परिचय

गुप्त-साम्राज्य

परमेश्वरीलाल गुप्त

तृतीय परिवर्धित एवं संशोधित संस्करण : 2011

पृष्ठ : 708 पृ०

सजि. : रु० 750.00 ISBN : 978-81-7124-725-7

अजि. : रु० 450.00 ISBN : 978-81-7124-608-3

प्रकाशक : विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

इतिहास-लेखन कला भी है और साहित्य का महत्त्वपूर्ण अंग भी। अक्सर इस सम्बन्ध में चर्चा होती रहती है। अकबरनामा, बाबरनामा, जहाँगीरनामा जैसे अनेक ग्रन्थ क्या इतिहास हैं या जीवन-चरित? इस सम्बन्ध में मत-मतान्तर होते रहते हैं। हमारे पुराण भी इतिहास हैं क्योंकि इनके माध्यम से भारत की प्राचीनतम परिस्थितियों की जानकारी मिलती है, लेकिन आज के देशी और विदेशी इतिहासकार इनको मिथक मानकर स्वीकार नहीं करते। प्राचीन भारतीय इतिहास के सूत्र इतने कम और इतनी अधिक दिशाओं में प्रक्षिप्त हैं कि उनको सुनिश्चित रूप देना सहज नहीं है। सुलभ सामग्री का विवेचन और विश्लेषण कर ही इतिहास का रूप तैयार होता है। इस दिशा में डॉ० परमेश्वरीलाल गुप्त का भगीरथ प्रयास प्रशंसनीय है। 'गुप्त-साम्राज्य' का राजनीतिक, सांस्कृतिक और सामाजिक इतिहास तैयार करने में उन्हें अनेक कठिनाइयों से गुजरना पड़ा है। शोधपरक सामग्री, उत्खनन से प्राप्त सिक्के, टेराकोटा प्रभृति के विश्लेषण से इतिहास का रूप निर्मित होता है। इस ग्रन्थ के लेखक ने सन् 1970 ई० में इसे प्रकाशित कराया था। तब से शोधादि सामग्री तथा मुद्राओं से अनेक ऐसे तथ्य आए जिनसे पुनर्लेखन तथा नई सामग्री का विवेचन-विश्लेषण करना पड़ा। प्रस्तुत ग्रन्थ का द्वितीय संस्करण सन् 1991 ई० में प्रकाशित हुआ था। लेखक का श्रमसाध्य अनुसन्धान तब से जारी रहा है। मुद्रा-शास्त्री होने की वजह से तथा नई-नई सामग्री प्राप्त होने से विषय-वस्तु में परिवर्तन, परिवर्धन और विवेचन करना पड़ा। भारत के प्राचीन इतिहास में 'गुप्त-वंश' या 'गुप्त-साम्राज्य' उत्कर्षपूर्ण विरासत है। लेखक आजीवन साधक के रूप में इस कार्य में निमग्न रहे हैं। ग्रन्थ के इस तीसरे संस्करण में इतिहास-सम्मत आधुनिकतम तथ्यों तथा शोधपूर्ण सामग्री का समावेश किया गया है जिससे स्नातकोत्तर विद्यार्थियों को पूर्वापेक्षा नई सामग्री पढ़ने को मिलेगी। परमेश्वरीलाल गुप्त इस धरती पर नहीं हैं, लेकिन उनका शोधसम्पन्न विवेचन पाठकों को आगे के अध्ययन में सहायता प्रदान करेगा।

ग्रीक-भारतीय अथवा यवन

अवध किशोर नारायण

पृष्ठ : 288 पृ०

सजि. : रु० 300.00

ISBN : 81-7124-166-2

प्रकाशक : विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

यह पुस्तक प्रोफेसर अवध किशोर नारायण की अन्तर्राष्ट्रीय प्रसिद्धिप्राप्त पुस्तक 'दि इन्डो-ग्रीक्स' का हिन्दी अनुवाद है। इसमें उन ग्रीक लोगों का इतिहास है जो अफगानिस्तान में हखामनी सम्राटों द्वारा निर्वासित कर दिये गये थे और जिनके साथ बाद में अलेक्जांदर की सेना के साथ आये हुए ग्रीक-मैसिडोनियम उपनिवेशी भी शामिल हो गये थे। इन लोगों ने अलेक्जांदर के पूरबी उत्तराधिकारी सिल्युकसवंशीयों के अधीनस्थ न रहकर बैक्ट्रिया में एक स्वतंत्र राज्य स्थापित कर लिया था और क्रमशः दक्षिण और दक्षिणपूर्व की ओर, आज के प्रायः सम्पूर्ण अफगानिस्तान एवं पाकिस्तान के भौगोलिक क्षेत्र पर अधिकार कर लिया, और गंगा-यमुना घाटी में भी घुस-पैठ किया। इनके करीब चालीस शासकों ने लगभग दो सौ वर्ष तक अपना प्रभुत्व प्राचीन भारत के उन भौगोलिक हिस्सों पर, जो कि वर्तमान अफ़गानिस्तान और पाकिस्तान में है, कायम रखा, पर ये यहाँ की मिट्टी में ही सन गये; भारतीय इतिहास और संस्कृति के अंग हो गये। भारतीय संस्कृति और प्राचीन पश्चिमी संस्कृति के बीच आदान-प्रदान में इनका महत्त्वपूर्ण योगदान रहा। इन्हें भारतीय साहित्य में यवन कहा गया, इनके राजा मिलिन्द बौद्ध हो गये, इनके एक राजपुरुष हिलियोदोरस भागवत् सम्प्रदाय के हुए। यदि एक राजा ने वासुदेव और संकर्षण के चित्र अपने सिक्कों पर दिया तो एक राजपुरुष ने बेसनगर में गरुड़स्तम्भ बैठाया। इनके सिक्कों की शुद्धता और कलात्मकता प्रसिद्ध है। प्राचीन संसार का सबसे बड़ा सोने का और सबसे बड़ा चाँदी का सिक्का इन लोगों ने चलाया। इनका इतिहास, जैसा कि इस ग्रन्थ के पाठक पायेंगे, सच पूछिये तो सिक्कों के साक्ष्य पर ही मुख्यतः आधृत है। और स्वभावतः इस पुस्तक में इस पर अधिकाधिक बल दिया गया है, परन्तु अधिक महत्त्वपूर्ण निष्कर्षों की पुष्टि साहित्यिक स्रोतों के विश्लेषण से भी की गई है।

प्राचीन भारतीय राजनीतिक विचारधारा

डॉ० लल्लनजी गोपाल

पृष्ठ : 268

अजि. : रु० 150.00

ISBN : 81-7124-224-3

प्रकाशक : विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

प्राचीन भारत की राजनीति के स्वरूप के विषय में पाश्चात्य विद्वानों की बड़ी भ्रामक धारणा रही है। इसका एक प्रमुख कारण था कि वे भारत के प्राचीन साहित्य में से राजशास्त्र पर पृथक् ग्रन्थ ढूँढ़ने लगे, जबकि स्थिति इससे सर्वथा भिन्न थी। नीतिशास्त्र अथवा राजशास्त्र (राजधर्म) उस सार्वभौमिक और व्यापक धर्म का अंश था जो व्यक्ति, समाज और राज्य, सभी के कार्य-कलापों का नियमन करता था। बीसवीं सदी के आरम्भ में कौटिल्य कृत अर्थशास्त्र के प्रकाशन के पश्चात् यह भी प्रमाणित हो चुका है कि भारत में राजनीति अध्ययन का एक विशेष विषय था और उस पर अनेक स्वतन्त्र ग्रन्थ लिखे गये थे।

भारत में राजशास्त्र का एक विकसित स्वरूप विद्यमान था जो आधुनिक राजनीतिशास्त्र के मूल सिद्धान्तों एवं धारणाओं से बहुत भिन्न नहीं था। थोड़ी भिन्नता है, वह इसलिए कि भारत की अपनी सामयिक आवश्यकता थी। राजनीति व्यावहारिक पहलुओं से विशेषतया देखी गई। दार्शनिक पक्ष का विमर्श गौण हुआ। पाश्चात्य राजनीतिविज्ञों ने क्या होना चाहिए, इस दृष्टिकोण से अपना दर्शन प्रस्तुत किया। कुछ समाजवादी राजनीतिक चिन्तकों को छोड़कर प्रायः सभी विचारकों ने अपने दर्शन में अपने युग की सामाजिक गतिविधियों को बहुत महत्त्व नहीं दिया है। उनकी दृष्टि में राज्य और समाज दो भिन्न तत्त्व हैं। भारत में राज्य एक बृहत् समाज का अंग समझा जाता था।

भारतीय राजनीति की इन विशेषताओं को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत ग्रन्थ को कुछ नये दृष्टिकोण से लिखा गया है। प्राचीन भारत की राजनीति अथवा राजशास्त्र पर कई ग्रन्थ प्रकाशित हैं और कुछ लिखे जा रहे हैं। किन्तु सामाजिक तथा धार्मिक परिप्रेक्ष्य में विकसित राजनीतिक धारणाओं का समग्रता से विवेचन नहीं किया गया है। भारतीय राजनीति का सही अध्ययन उसकी सामाजिक तथा धार्मिक व्यवस्थापनाओं की पूर्ण जानकारी के बिना सम्भव नहीं है। यह पुस्तक 'प्राचीन भारतीय राजनीतिक विचारधारा' इसी दृष्टिकोण से लिखी गई है।

प्रस्तुत पुस्तक में भिन्न-भिन्न युगों की

विशेषताओं को ध्यान में रखते हुए इसमें राज्य की अवधारणा, राजसत्ता की सीमा, राजा के कर्त्तव्य और अधिकार, राज्य में दण्ड अथवा उसकी प्रतिरोधी शक्ति, मन्त्रिपरिषद्, कर-व्यवस्था तथा प्रशासकीय इकाइयों आदि की संक्षिप्त किन्तु सूक्ष्म विवेचना की गई है। आधुनिक युग के सन्दर्भ में भी इसकी उपयोगिता है। जिन राजनीतिक सिद्धान्तों पर चलकर राज्य जन-सामान्य के सर्वांगीण विकास के लिए प्रयास करता है तथा जिन सामाजिक सिद्धान्तों पर आधारित सामाजिक संगठन के प्रमुख मूल्य आज भी सक्रिय हैं,उनसे कुछ अवश्य लिया जा सकता है।

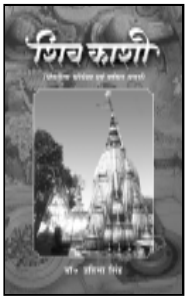

शिव काशी

डॉ० प्रतिभा सिंह

पृष्ठ : 284 +16 पृ० चित्र

सजि. : रु० 400.00

ISBN : 81-7124-370-3

प्रकाशक : विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

'शिव काशी' पौराणिक परिप्रेक्ष्य से प्रारम्भ होकर वर्तमान सन्दर्भ में शिव-मयी काशी के बहुआयामी पक्षों की व्याख्या पर एक प्रमाणित दस्तावेज है। पहली बार तीर्थ-विज्ञान (तीर्थोलॉजी) की आधारशिला स्थापित करने का प्रयास किया गया है। विषयवस्तु को सात अध्यायों में वर्णित किया गया है—प्रथम अध्याय में तीर्थों के अध्ययन की प्रवृत्ति, आयामों की समीक्षा तथा भविष्यत् प्रारूप का ढाँचा। द्वितीय अध्याय में शिव के ऐतिहासिक तथ्यों की (मिथकों, इतिहास, विभिन्न काल तथा आधुनिक सन्दर्भ में) समीक्षा। तृतीय अध्याय में शैव स्थलों की परम्परा के ब्रह्माण्डीय, वैश्विक तथा क्षेत्रीय प्रारूप के सन्दर्भ में वर्णित प्रतीकों का विश्लेषण। चतुर्थ अध्याय में काशी के धार्मिक भूगोल में शिव का स्थान, काशी का उद्भव, शिवजनित मिथकों, शैव स्थलों के विविध रूप, प्रकार तथा महत्त्व का विवरण। पंचम अध्याय में काशी की शिव यात्राओं, तीर्थाटन पथ, विभिन्न तीर्थपंथों पर शिव के विविध रूपों, भूवैन्यासिक प्रारूप एवं क्षेत्रगत परिसीमाओं का वर्णन। षष्ठम् अध्याय में शिव-सम्बन्धित पर्व-त्योहारों, पवित्र एवं पुण्य काल तथा अनुष्ठानों का विस्तृत लेखा-जोखा। सप्तम अध्याय में तीर्थयात्रा पर्यटन में शिव का महत्त्व, वैकल्पिक पर्यटन, धरोहर नियोजन, संभाव्यता तथा मानव नियोजन की उपयोगिता की झाँकी। परिशिष्ट में 12 ज्योतिर्लिंगों, 12 स्वयंभूलिंगों तथा काशी खण्डोक्त 524 शिवरूपों की पौराणिक सूची एवं अवस्थिति दी गई है।

महाभारत का कालनिर्णय

डॉ० मोहन गुप्त

पृष्ठ : 224

सजि. : रु० 300.00

ISBN : 81-7124-292-8

प्रकाशक : विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

महाभारत भारतीय सभ्यता के वर्तमान दौर की आधारशिला है। वह भारत के प्रागितिहास तथा इतिहास का सेतु है। वैदिककाल की इयत्ता है। पुराणों में महाभारतोत्तर राजाओं के लिए भविष्यत् काल का प्रयोग किया गया है तथा उससे पूर्व के राजाओं के लिए भूतकाल का। अत: महाभारत हमारे वर्तमान तथा अतीत दोनों की देहली पर अवस्थित उभय प्रकाशक है। इसलिये देश के इतिहास तथा उसकी आनुपूर्वी को समझने के लिए महाभारत युद्ध का काल निर्णय नितान्त आवश्यक है।

इस सम्बन्ध में अभी तक जो प्रयास हुए हैं वे या तो कलियुगारम्भ की परम्परा को ध्यान में रखकर उसकी पुष्टि में हुए हैं या वराहमिहिर-कल्हण की मान्यता के पोषण में हैं। कुछ लोगों ने पुराणों की वंशावलियों के आधार पर काल निर्धारण किया है तो कुछ ने ज्योतिष के आधार पर। किन्तु अब तक हुए सभी प्रयास अनेक प्रश्न अनुत्तरित छोड़ जाते हैं। उदाहरणार्थ कलियुगारंभ की परम्परा पुराणों के इस स्पष्ट उल्लेख के विरुद्ध है कि परीक्षित् तथा महापद्मनन्द के बीच बीस या बाईस राजा हुए जिनकी कुल अवधि 1500 वर्ष है।

वराहमिहिर-कल्हण की परम्परा की व्याख्या में ही अनेक मतभेद हैं तथा प्रचलित व्याख्या पुराणों की परम्परा के प्रतिकूल है तथा दोनों परम्परायें इस पुरातात्विक तथ्य के विरुद्ध हैं कि सरस्वती नदी ईसापूर्व लगभग 200 में सूख गई थी तथा महाभारत में सूखी सरस्वती का उल्लेख स्थान-स्थान पर है। वंशावलियों में औसत 18 वर्ष से 40 वर्ष तक लिया गया है जो कभी कोई निश्चित निष्कर्ष नहीं दे सकता। जो प्रयास ज्योतिष के आधार पर हुए हैं उनमें किसी ने भी प्रस्तावित तिथि का ग्रह स्पष्ट नहीं किया अत: उनमें परस्पर विरोधाभास है तथा वे तार्किक परिणति तक नहीं पहुँच सके।

पहली बार इस ग्रन्थ में अब तक प्राप्त सभी प्रमाणों—ऐतिहासिक, पौराणिक, पुरातात्विक तथा ज्योतिष सम्बन्धी—की समीक्षा करके ठोस गणितीय आधार पर महाभारत का काल निर्धारण किया गया है। इसमें न केवल महाभारत की वास्तविक तिथि, नक्षत्र, वार दिनाङ्क दिये गये हैं अपितु अवान्तर घटनाओं की भी तिथियाँ, श्रीकृष्ण तथा सभी पाण्डवों की जन्म तिथियाँ, वनवास की अवधि, विवाद का कारण विभिन्न वीरों के निर्वाण की तिथियाँ तथा श्रीकृष्ण एवं पाण्डवों के महाप्रयाण तक की सम्पूर्ण विगत दी गई है। ये निष्कर्ष न केवल महाभारत के ज्योतिष विषयक सन्दर्भों के अनुरूप हैं अपितु अभी तक उपलब्ध तत्सम्बन्धी सभी प्रमाणों के भी अनुरूप हैं। लेखक ने महाभारत काल का पञ्चाङ्ग ही बना दिया है जो महाभारत में दी गई ग्रहस्थिति से मेल खाता है।

भारतीय इतिहास संस्कृति तथा सभ्यता के अध्येताओं तथा सामान्य प्रबुद्ध पाठ के लिये भी यह पुस्तक अत्यन्त उपयोगी है तथा उनकी अनेक जिज्ञासाओं को शान्त कर बुद्धि को विश्राम देने वाली है।

बढ़ते कदम-बदलते आयाम

डॉ० परमेश्वरीलाल गुप्त

पृष्ठ : 312

अजि. : रु० 250.00

प्रकाशक : विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

हिन्दी-साहित्य के क्षेत्र में जाने-माने अन्वेषक, सूफी-साहित्य के विद्वान एवं मूर्धन्य लेखक तथा विश्वविख्यात मुद्रातत्वविद्, पुरातत्वज्ञ और इतिहासकार, विद्यासागर डॉक्टर परमेश्वरीलाल गुप्त की 80वीं वर्षगाँठ के अवसर पर अभिनन्दन स्वरूप यह ग्रन्थ प्रस्तुत किया गया था।

अभिनन्दन-ग्रन्थों के विद्वत्तापूर्ण लेखों के संग्रह की प्रचलित परिपाटी से सर्वथा भिन्न, इस ग्रन्थ में उन स्वजनों, आत्मीयजनों, सहकर्मियों एवं उन व्यक्तियों द्वारा प्रस्तुत संस्मरण और स्मृति-चित्र हैं जिन्होंने गुप्तजी के जीवन के बढ़ते हुए कदमों के साथ उसके बदलते हुए आयामों को निकट से देखा, पहचाना और उनके कृतित्व का आकलन किया है। यह कहना अधिक उचित होगा कि इस संस्मरणात्मक विधा में समष्टि रूप से गुप्तजी के जीवन का सर्वांगीण प्रामाणिक चित्र प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। इसी कारण इसे अभिनन्दन ग्रन्थ की संज्ञा न देकर सामान्य ग्रन्थ की तरह विषयानुरूप इसे **बढ़ते कदम-बदलते आयाम** से अभिहित किया गया है। आशा है यह इसी रूप में स्वीकार किया जायेगा।

इस संग्रह में 52 लेख हैं। इनमें एक लम्बा लेख गुप्तजी की पत्नी श्रीमती अन्नपूर्णा गुप्ता का है; इसमें उन्होंने पारिवारिक परिवेश को विस्तृत रूप से उजागर किया है। वह गुप्तजी के अनजाने पक्ष को उपस्थित करता है।

इस ग्रन्थ में सोलह लेख ऐसे लोगों के हैं

जिन्होंने गुप्तजी को बाल्यकाल से युवाकाल तक पल्लवित, पुष्पित और विकसित होते देखा था और वे आज हमारे बीच नहीं हैं। प्राय: ये सभी लेख गुप्तजी की 50वीं वर्षगाँठ के अवसर पर पटना में आयोजित सार्वजनिक अभिनन्दन के अवसर पर '**व्यक्तित्व और कृतित्व**' शीर्षक से पुस्तकाकार प्रकाशित हुए थे; उन्हें यहाँ पुन: प्रकाशित किया गया है। ऐसे लेख यहाँ तारांकित हैं। चौबीस लेख उन लोगों के हैं जो विगत 30-35 बरसों के बीच गुप्तजी के सम्पर्क में आये और वे उनके इस कृतित्व काल से ही परिचित रहे हैं।

उत्तरशती के उपन्यासों में स्त्री

डॉ० शशिकला त्रिपाठी

पृष्ठ : 136

सजि. : रु० 120.00

ISBN : 81-7124-490-4

प्रकाशक : विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

स्त्री-मुक्ति संघर्ष के दो आयाम हैं—परिवार और समाज। दोनों ही संस्थानों में स्त्री द्वितीय, पराधीन और उत्पीड़िता रही है। इन प्रचलित मान्यताओं से टकराती आज की स्त्री का मुक्ति-संघर्ष घर-परिवार से शुरू होता है फिर समाज की अनेकायामिता में वह अपना अस्तित्व गढ़ती है। समाज की मुख्यधारा में प्रविष्ट होती है। उसने अपनी सृजनात्मकता को पहचाना है। वैचारिक, राजनीतिक, आर्थिक आदि क्षेत्रों में उसने अपनी उपस्थिति दर्ज कराई है। यह उपस्थिति क्या स्वतन्त्र होना नहीं है? पर, दु:खद सत्य यह भी है कि स्त्री को कैसा होना चाहिए, और क्या करना चाहिए, यह निर्णय आज की तारीख में भी पुरुष ही कर रहा है। अत: प्रस्तुत पुस्तक स्त्री-मुक्ति संघर्ष का ही एक अभियान है। मगर, आलोचनात्मक रुख़ के साथ।

आलोचना, रचना की तुलना में समृद्ध नहीं है। रचना में जितनी उर्वरता, भिन्नता रही है, उतनी ही आलोचना संकटापन्न मानी जाती रही है। आलोचना अपने स्वरूप में सोते जैसी रही है। आलोचना के क्षेत्र में कुछ लेखिकाओं की सक्रियता के बावजूद उनकी गणना प्राय: नहीं की जाती। प्रस्तुत पुस्तक आलोचना के इस शून्य को भी भरने का एक प्रयत्न है। पुस्तक में संकलित सभी समालोचनात्मक लेख स्त्री-केन्द्रित उपन्यासों पर आधारित हैं। यह पुस्तक इस अर्थ में महत्त्वपूर्ण है कि एक ओर जहाँ यह पुस्तक हिन्दी उपन्यासों का मूल्यांकन है वहीं 'स्त्री विमर्श' के रचनात्मक स्वरूप का उद्घाटन भी है। फिलहाल, पुस्तक अपनी विशिष्टताओं और न्यूनताओं के साथ प्रस्तुत है।

पत्र मणिपुतुल के नाम

कुबेरनाथ राय

पृष्ठ : 112

अजि. : रु० 80.00

ISBN : 81-7124-364-9

प्रकाशक : विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

ये लेख पत्र-विधा में लिखे गये **ललित निबन्ध** हैं। पत्र-विधा में बहुतों ने उपन्यास और कहानियाँ लिखी हैं, तो फिर ललित निबन्ध क्यों नहीं? ये पत्र विषय की दृष्टि से गाँधीवादी चिन्ता के इर्द-गिर्द घूमते हैं और गाँधीजी के भोजनपान-सम्बन्धी विचारों से लेकर उनकी रसदृष्टि (aesthetics) और शील-दृष्टि (ethics) तक इनका फैलाव है। गाँधीजी ने जो कुछ 'लिखा' उसी के ही आधार पर नहीं, बल्कि जो कुछ 'लिखा', 'कहा' और 'किया', तीनों के आधार पर और कभी-कभी तीनों का मर्म समझते हुए गाँधीजी की चिन्ता का विस्तार भी करने की चेष्टा की गयी है। मेरी कल्पना है कि भविष्य में गाँधीवाद के भी दो रूप होंगे—'लघुयान' और 'महायान'। मैं अपने को 'महायान' से जोड़ता हूँ। ये निबन्ध सर्वांगपूर्ण व्याख्याएँ नहीं देते। विषय के प्रतिपादन की फुटकर चेष्टा भर करते हैं एक घरेलू वातावरण के मध्य। वस्तुत: निबन्ध यानी 'ऐसे' (मूल शब्द फ्रेंच Essais) का अर्थ ही होता है 'स्फुट चेष्टा'। इस 'स्फुट प्रयत्न' की सीमा में गाँधीजी का रस-दर्शन और नीति-दर्शन कितना समा सका है, दिया गया है।

यह तो हुई विधा और विषय की चर्चा। अब इस छोटी-सी किताब के लिखने का प्रसंग अर्ज करूँ। इसका प्रथम पत्र बेकारी और नियोजन की समस्या को लेकर लिखा गया है और यह अपने मूल प्रारूप में एक सही घटना पर आधारित है और अपने मूल रूप में मेरी उच्च शिक्षिता भातृवधू श्रीमती हीरामणि राय को (जिसे घर में 'पुतुल' भी कहा जाता है) सचमुच लिखा गया है। बाद में उस पत्र को परिवर्द्धित और संशोधित करके मैंने गाँधी-मार्ग को भेज दिया सम्पादक महोदय, पं० भवानीप्रसाद मिश्र ने 6-7 ऐसे पत्र लिखने का प्रस्ताव किया, यों प्रस्ताव क्या किया तकाजा कर-करके लिखवाया; और इस तरह कुल मिलाकर 14 पत्र हो गये। एक बात मैं पाठक से निवेदन करना चाहता हूँ। ये पत्र शुद्ध साहित्यिक कृतियाँ हैं और प्रथम पत्र के बाद की मणिपुतुल एक काल्पनिक प्रतीक है। कुछ घटनाएँ 'व्यक्तिगत' और सही होते हुए भी अपनी 'समूहगत' और 'रचनात्मक' आकृति और भूमिका में प्रस्तुत की गयी हैं। ललित निबन्ध का धर्म ही यही है।

इस पुस्तक की मणिपुतल व्यक्ति नहीं, प्रतीक है—इसका इशारा अन्तिम पत्र के अन्त में साफ-साफ कर दिया गया है। मणिपुतुल प्रतीक है 'नई पीढ़ी' का।

भले ही रचना छोटी और नगण्य क्यों न हो, मुझे इसके लिखने में आनन्द आया है और इस हिन्दुस्तान में बहुतों को पढ़ने में भी आनन्द आएगा, ऐसा विश्वास है। **—कुबेरनाथ राय**

लोकगीतों के सन्दर्भ और आयाम

डॉ० शान्ति जैन

पृष्ठ : 736

सजि. : रु० 700.00

ISBN : 81-7124-214-6

प्रकाशक : विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

अछोर क्षितिज तक फैला अनन्त आकाश है—लोकगीतों का। अतल सागर जैसी गहराई है—लोकगीतों की। जंगल में उगे पेड़-पौधों की तरह अनादि है—इनका इतिहास। हृदय से निकले स्वर गीत बन गये, संगीत बन गये। समग्र जनजीवन के जीवन्त चित्र प्रस्तुत करते ये लोकगीत भारत की लोक संस्कृति के चित्रपट हैं।

शाश्वत सत्य है कि लोकगीतों में हमारे संस्कारों की आत्मा है। श्रुतिपरम्परा की इस विधा में कृत्रिमता का कहीं स्थान नहीं। हर अवसर, हर ऋतु, हर रंग में गाये जाने वाले गीत सहज ही लोगों को अपनी ओर आकृष्ट कर लेते हैं। भले ही उनकी भाषा समझ से परे हो किन्तु स्वर और लय को भाषा के आधार की अनिवार्यता नहीं होती।

लोकगीतों में संवेदना की वह तपिश है, जिसकी आँच हर हृदय को लगती है। इनमें अनुभूतियों की वह शीतलता है जो संघर्षों से जूझते, श्रमश्रान्त व्यक्ति के लिये सुधा बनकर बरसती है। इनमें कहीं शृंगार रस से लबालब भरे चटकीले गीत हैं, कहीं प्रतीक्षा और वियोग की करुणा से परिपूर्ण, तो कहीं जड़ में प्राण फूँकने वाले ओजभरे स्वर हैं। इनकी नैसर्गिकता में अलौकिक प्रभाव है।

लोकगीतों का संक्षिप्त परिचय, उसके प्रकार, विभिन्न प्रदेशों के संस्कार गीत, ऋतुओं के, व्रत-त्योहारों के, विभिन्न जातियों के, श्रमिकों के, बालक-बालिकाओं के, नृत्य के, विभिन्न रसों के, धार्मिक भावना के तथा किसी भी समय गाये जाने वाले गीतों का अध्ययन ग्यारह अध्यायों में प्रस्तुत किया गया है।

लोक जीवन तथा लोक संस्कृति पर आधारित लोकगीतों के विविध आयामों का अध्ययन इस ग्रन्थ की विशेषता है।

प्राप्त पुस्तकें और पत्रिकाएँ

रख रजपूत रासो, लेखक : कविराज दिलीप सिंह 'चन्दज', सम्पा० : फतह सिंह लोढ़ा, प्रकाशक : यतीन्द्र साहित्य-सदन, सरस्वती विहार, भीलवाड़ा (राजस्थान), मूल्य : 300/- रु० मात्र

× × × हिन्दी एवं राजस्थानी भाषा के वयोवृद्ध रचनाकार कविराज दिलीप सिंह 'चन्दज' की यह रचना व्यक्तिपरक रासो-परम्परा से हटकर समूहपरक विश्लेषण और उद्‌बोधन है। काव्य में ऐतिहासिक सर्वेक्षण के साथ सामाजिक-सांस्कृतिक मूल्यों के क्षरण पर चोट की गयी है। मूल रचना के साथ अनुवाद, व्याख्या एवं दूसरे महत्त्वपूर्ण विवरणों को प्रस्तुत करते हुए इस ग्रन्थ का सम्पादन, सम्पादक के अध्यवसाय का परिचायक है।

हिन्दी बाल-साहित्य विमर्श, डॉ० शकुन्तला कालरा, यतीन्द्र साहित्य सदन, भीलवाड़ा (राजस्थान), मूल्य : 400/- रु० मात्र

× × × हिन्दी बाल-साहित्य के अध्ययन, आलोचना और अनुसंधान के बीच उपजा है यह ग्रन्थ—'हिन्दी बाल-साहित्य विमर्श'। हिन्दी के ही 30 चुने हुए बाल-साहित्य लेखकों के साथ समय-समय पर लिये गये साक्षात्कारों का यह संकलन बाल-मन और बाल साहित्य का सहज विश्लेषण करते हुए समग्र विमर्श को एक नये आयाम की ओर ले जाता है।

गीतांकुर, डॉ० नलिन, विवेक प्रकाशन, 4-ई-6, तलवंडी, कोटा (राजस्थान), मूल्य : 100/- रु० मात्र

× × × गीतों के इस संग्रह में कुल 108 गीत संकलित हैं। रागात्मक-संवेगों से लबालब रूमानियत के ये गीत जीवन के सभी पक्षों के बीच उपजे हैं, कवि के शब्दों में × × ×

''कोमल से पौधे पर / कुछ काँटे भी रखते / फिर शायद
जीवन का / स्वाद ज़रा कुछ चखते।''

किसी और ही तरह, ओम प्रकाश उदासी, वितरक : अमृता प्रकाशन, अहमदाबाद-380015, मूल्य : 60/- रु० मात्र

× × × मजूर महाजन संघ में काम करते हुए कवि ने गरीब मज़दूर-किसानों के संघर्ष को समझा है, कम्पनियों के पर्सोनल-विभाग में कार्यरत रहकर उत्पादन-वितरण और मुनाफे का गणित जाना है। तथाकथित कविताई के लिहाज़ से भले ही उसे काव्य की कसौटी पर न कसा जाय किन्तु महात्मा गाँधी जैसी तीक्ष्ण सपाटबयानी उसकी विशेषता है × × ''चाँदी के ढेरों पर बैठे / तुम हँसते हो क्यों हम पर / हमारे ही दर्दों-प्रस्वेदों से / महल तुम्हारे बाँधे गये हैं न!''

सार-संसार, (विदेशी भाषा साहित्य की त्रैमासिक हिन्दी पत्रिका) अप्रैल-जून 2010, मूल्य : 20/- रु० मात्र, प्रकाशक एवं सम्पा० : अमृत मेहता, J-3/C लाजपत नगर III नई दिल्ली-24

× × × पत्रिका के इस अंक में 7 विदेशी भाषाओं की कहानियों और 5 कवियों की ग्यारह कविताओं को हिन्दी में प्रस्तुत किया गया है। अपनी भाषा में विश्व साहित्य से रूबरू होकर पाठक को वैश्वक-संस्कृति का आस्वाद प्रदान करना एक महत्त्वपूर्ण दायित्व है जिसे यह पत्रिका पूरा करती है।

साकल्य, डॉ० गिरजाशंकर शर्मा, शिव संकल्प साहित्य परिषद, शिवाजी नगर उपनिवेशिका, नर्मदा पुरम्-461001, मूल्य : 100/- रु० मात्र

×××लेखक की शोध-यात्रा के बीच लिखे गये निबन्धों का संग्रह है 'साकल्य'। अलग-अलग वाद-वृत्ति के साहित्यकारों की सर्जना का विश्लेषण करते हुए लेखक ने यह यात्रा पूरी की है।

गिरिमोहन गुरु और उनका काव्य, सतबीर सिंह, मध्य प्रदेश तुलसी साहित्य अकादमी; 50 सुन्दर बंगला, महाबलीपुरम्, कोलार रोड, भोपाल, साहित्यिक सहयोग : 100/- रु० मात्र

× × × विश्वविद्यालय की एम०फिल० उपाधि के लिये स्वीकृत, शोधार्थी द्वारा प्रस्तुत यह लघु शोध प्रबन्ध आचार्य गिरिमोहन गुरु के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का सामान्य परिचय भर है। गिरिमोहन गुरु की रचनाओं पर समग्र शोध होना चाहिए।

भारतीय वाङ्मय

मासिक

वर्ष : 11 **अक्टूबर 2010** **अंक : 10**

संस्थापक एवं पूर्व प्रधान संपादक

स्व० पुरुषोत्तमदास मोदी

संपादक : **परागकुमार मोदी**

वार्षिक शुल्क : रु० 60.00

अनुरागकुमार मोदी

द्वारा

विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी

के लिए प्रकाशित

वाराणसी एलेक्ट्रॉनिक कलर प्रिण्टर्स प्रा० लि०

वाराणसी *द्वारा मुद्रित*

डाक रजिस्टर्ड नं० ए डी-174/2009-11

RNI No. UPHIN/2000/10104

प्रेस रजिस्ट्रेशन एक्ट 1807 ई० धारा 5 के अन्तर्गत

Licenced to post without prepayment at G.P.O. Varanasi

Licence No. LWP-VSI-005/2009-2011

सेवा में,

प्रेषक : (If undelivered please return to :)

विश्वविद्यालय प्रकाशन

प्रमुख प्रकाशक एवं पुस्तक विक्रेता

(विविध विषयों की हिन्दी, संस्कृत तथा अंग्रेजी पुस्तकों का विशाल संग्रह)

विशालाक्षी भवन, पो०बॉक्स 1149

चौक, वाराणसी-221 001 (उ०प्र०) (भारत)

VISHWAVIDYALAYA PRAKASHAN

Premier Publisher & Bookseller

(BOOKS IN HINDI, SANSKRIT & ENGLISH FOR STUDENTS, SCHOLARS, ACADEMICIANS & LIBRARIANS)

Vishalakshi Building, P.O. Box : 1149

Chowk, VARANASI-221 001(U.P.) (INDIA)

☎ : Offi. : (0542) 2413741, 2413082, 2421472, (Resi.) 2436349, 2436498, 2311423 ● Fax : (0542) 2413082

E-mail : sales@vvpbooks.com ● Website : **www.vvpbooks.com**